ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

*गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥*
*अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥*

मासिक

# गुरमति ज्ञान

चेत-वैशाख, संवत् नानकशाही ५४४
वर्ष ५ अंक ८ अप्रैल 2012

*संपादक :* सिमरजीत सिंघ *एम. ए, एम. एम. सी.*
*सहायक संपादक :* जगजीत सिंघ *एम. एम. सी.*

| चंदा | |
|---|---|
| वार्षिक (देश) | १० रुपये |
| आजीवन (देश) | १०० रुपये |
| वार्षिक (विदेश) | २५० रुपये |
| प्रति कापी | ३ रुपये |

*चंदा भेजने का पता*
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन: 0183-2553956-60, फैक्स: 0183-2553919

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

## विषय-सूची

गुरबाणी विचार २
संपादकीय ३
भारतीय जनसाधारण के नायक श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ६
-डॉ. सुधा जितेंद्र
श्री गुरु अंगद देव जी की बाणी में . . . ५
-डॉ. कृष्ण भावुक
मानव जीवन-मूल्यों के संरक्षक : शेख़ फरीद जी १२
-डॉ. निर्मल कौशिक
खालसा पंथ की साजना : एक करिश्मा . . . १६
-डॉ. जगजीत कौर
इंकलाबी वैसाखी २०
-डॉ. अवतार सिंघ
खालसा का निर्माण-स्थल : श्री अनंदपुर साहिब २४
-डॉ. सुधा जितेन्द्र
आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध . . . २७
-डॉ. गुरमीत सिंघ
गुरमति संगीत का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य ३३
-डॉ. प्रेम मच्छाल
मन मेरे! तुम उदास मत हो (कविता) ३६
-श्री प्रशांत अग्रवाल
नानक साचि रते बिसमादी . . . ३७
-डॉ. नरेश
भाई नंद लाल जी 'गोया' ३९
-श्री चन्द्र शेखर 'अक्स भारती
श्री हरिमंदर साहिब में राग 'बसंत' की मर्यादा ४२
-स. बिक्रमजीत सिंघ
गुरबाणी चिंतनधारा : ५७ ४४
-डॉ. मनजीत कौर
दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि : ५१ ५०
-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'
सच्चा इंसान (कविता) ५१
-श्री प्रशांत अग्रवाल
संत-सिपाही (कविता) ५२
-श्री सुरजीत दुखी
सर्वोत्तम सच (कविता) ५३
स्वतंत्रता ? (कविता)
-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'
खबरनामा ५४

# गुरबाणी विचार

*खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा ॥*
*खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ॥१॥*
*प्राणी एको नामु धिआवहु ॥ अपनी पति सेती घरि जावहु ॥१॥रहाउ॥*
*तुधनो सेवहि तुझु किआ देवहि मांगहि लेवहि रहहि नही ॥*
*तू दाता जीआ सभना का जीआ अंदरि जीउ तुही ॥२॥*
*गुरमुखि धिआवहि सि अंम्रितु पावहि सेई सूचे होही ॥*
*अहिनिसि नामु जपहु रे प्राणी मैले हछे होही ॥३॥*
*जेही रुति काइआ सुखु तेहा तेहो जेही देही ॥*
*नानक रुति सुहावी साई बिनु नावै रुति केही ॥४॥* *(पन्ना १२५४)*

मलार राग में उच्चरित उपरोक्त शबद में श्री गुरु नानक देव जी नाम-सिमरन की महिमा का बखान करते हुए पावन फरमान करते हैं कि जन्म लेने के बाद मात्र खाने, पीने, हंसने, सोने में ही जीव अपना जीवन गुजार देता है। जीव जीवन को स्थाई समझकर मृत्यु को भूल जाता है। यह सत्य है कि जिसे मृत्यु याद नहीं रहती उसे परमात्मा भी याद नहीं रहता। खसम (प्रभु) को भुलाकर जीव अपना जीवन ख्वार कर लेता है, उसके पल्ले में हमेशा ख्वारी ही पड़ती है। प्रभु को भूल जाने से जीव का जीवन किसी काम का नहीं, निंदनीय है। गुरु जी ज़ोर देकर कहते हैं कि हे प्राणी! एक ही नाम (प्रभु का) सिमरन कर और प्रभु का नाम-सिमरन करते हुए इज्जत सहित प्रभु-घर (दर) में जा। जो प्रभु का नाम-सिमरन करते हैं उन्हें यह समझ आ जाती है कि देने वाला एक परमात्मा ही है, इसलिए वे सदा (परमात्मा से नाम-दान) मांगते ही रहते हैं और यह (नाम-दान) मांगने से वे चूकते नहीं। हे प्रभु! तू ही सब जीवों का दाता है और सब जीवों में एक तू ही निवास करता है। गुरु जी आगे फरमान करते हैं कि गुरमुख प्राणी ही प्रभु का नाम-सिमरन करते हैं, वही प्रभु का नाम-अमृत हासिल करते हैं और वही सच्चे जीवन वाले बनते हैं। हे प्राणी! दिन-रात प्रभु का नाम-सिमरन किया कर, क्योंकि नाम-सिमरन द्वारा बुरे आचरण वाले इंसान भी अच्छे बन जाते हैं।

गुरमुखों ने मानव-जीवन के लिए दो ऋतुएं मानी हैं-- एक, प्रभु-नाम-सिमरन वाली ऋतु तथा दूसरी, बिना प्रभु-नाम-सिमरन वाली ऋतु। इसी संदर्भ में जिक्र करते हुए गुरु जी कथन करते हैं कि जिस ऋतु में जीव रहता है उसके शरीर को वैसा ही सुख मिलता है और उसका शरीर भी वैसा ही हो जाता है अर्थात् यदि जीव प्रभु-नाम-सिमरन वाली (ऋतु की) अवस्था में जीता है तो उसे सुख मिलते हैं; यदि बिना प्रभु-नाम-सिमरन वाली (ऋतु की) अवस्था में रहता है तो उसे दुखों का सामना करना पड़ता है। शबद की अंतिम पंक्ति में गुरु जी का फरमान है कि प्रभु-नाम-सिमरन वाली ऋतु ही अच्छी है, इसके विपरीत कोई भी ऋतु आ जाए उसका जीव के जीवन में कोई प्रभाव नहीं रहता है। गुरु जी के कहने से तात्पर्य है कि मनुष्य को अपने जीवन में प्रभु-नाम-सिमरन करते हुए सदा इसी अवस्था में बने रहना चाहिए।

संपादकीय

# वैसाखी का गौरव और खालसा पंथ का भविष्य

वैसाखी भारतवासियों का सदियों पुराना त्यौहार है। रिवायत है कि इस दिन व्यास ऋषि ने चारों वेदों को सम्पूर्ण करके पहली बार इनका पाठ करके भोग डाला था। यह भी रिवायत है कि इस दिन राजा जनक ने यज्ञ करके अष्टावक्र से ब्रह्म-ज्ञान की प्राप्ति की थी। यह त्यौहार बिक्रमी संवत् के वैसाख महीने की संक्रांति को मनाया जाता है। यह मौसमी त्यौहार है। सर्दी के बाद मौसम में बदलाव आने के कारण यह मनुष्य-मन में नया उल्लास पैदा करता है। वृक्षों के निकले नये पत्ते प्रकृति में जोश भर देते हैं। किसान अपनी पक्की फसल को देखकर आनंदित हो जाता है। नयी फसल की आमद हर वर्ग को अपनी आर्थिक खुशहाली का संदेश दे रही होती है। इस तरह वैसाखी मानव-आर्थिकता तथा खुशहाली से जुड़ा विशेष दिवस है।

पंजाब के शूरवीरों द्वारा यह अपने भविष्य के लिए योजनायें तैयार करने वाला दिवस है। पंजाबी शुरू से ही इस दिन अपने निश्चित किए विशेष स्थान पर इकट्ठे होकर नाम-सिमरन करते तथा भविष्य के लिए योजनायें तैयार करते आए प्रतीत होते हैं।

वैसाखी का दिवस सिक्खों के लिए बड़ा विशेष है। पहले पातशाह साहिब श्री गुरु नानक देव जी ने समूची मानवता को जब्र-जुल्म का डटकर मुकाबला करने की प्रेरणा दी। गुरु साहिब ने जाबिर तथा चालाक लोगों के हाथों लूट का शिकार हो रहे भोले-भाले लोगों को सचेत किया; स्त्रियों एवं दबे-कुचले लोगों को अपने अस्तित्व का एहसास करवाने का क्रांतिकारी काम किया। इस कार्य के लिए गुरु साहिबान ने उम्र भर कठिन संघर्ष किया। वैसाखी के दिवस को मनाने के लिए सबसे पहले सिक्खों को श्री गुरु अमरदास जी ने प्रेरणा दी। गुरु जी ने भाई पारो जुलका को वैसाखी का पर्व मनाने का हुक्म करके संगत को इकट्ठा किया। वैसाखी के अवसर पर एकत्रित हुई संगत को सारे कर्मकांड छोड़कर अकाल पुरख का नाम-सिमरन करने, हाथों से किरत (श्रम) करने तथा बांट कर छकने के सिद्धांत पर डटकर पहरा देने की प्रेरणा की।

छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सिक्खों को शस्त्रधारी होने की प्रेरणा की। हाकिम, जो जालिमों का रूप धारण कर गए थे, उनसे रक्षा के लिए शस्त्रों की ही ज़रूरत थी। संगत गुरु के ओट-आसरे में बढ़िया शस्त्र एवं घोड़े लेकर पहुंचने लगी। सच पर मर-मिटने वाले शूरवीरों की तैयारियां देख-सुनकर पापियों के हृदय कांपने लगे। दसवें पातशाह साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए वैसाखी वाले दिन शस्त्रों को धारण करना सिक्खी का जरूरी अंग बना दिया। गुरु जी ने भरे दीवान में से पांच सिरों की मांग की। बिना किसी जात-पात, ऊंच-नीच के भेद से पांच सिर पेश हुए। इन पांच मरजीवड़ों से खालसा पंथ का जन्म हुआ जो हरेक बड़ी से बड़ी मुसीबत के आगे छाती तानकर खड़ा हो सकता है। गुरु साहिबान से प्राप्त शिक्षा तथा हक-सच के लिए मर-मिटने की प्रेरणा के कारण खालसा पंथ ने बड़ी से बड़ी कुर्बानी दी। गुरु साहिब ने इस पंथ में शामिल होकर अपना सरवंश वार दिया। खालसा पंथ इंकलाबी गतिविधियों का शाह-सवार सिद्ध हुआ। इसने भारतीय समाज के गले पड़ी सदियों पुरानी गुलामी की जंज़ीरें उतार फेंकी।

वैसाखी तथा दीपावली (बंदी छोड़ दिवस) खालसे की इकत्रता के दो महान दिवस बन गए। इन दिवसों पर खालसा पंथ अपनी की हुई भूलों तथा आने वाले समय पर अहम विचार करता और आपसी भेदभाव भुला देता। १७३३ ई की वैसाखी को ज़करीया ख़ान ने खालसे की चढ़त के आगे घुटने टेकते हुए गुरु पंथ को नवाबी की पेशकश की, जिसको खालसा पंथ ने अहम विचार करके कबूल किया था। १७४७ ई में वैसाखी के दिवस पर एकत्रित खालसा पंथ ने रामरौणी की कच्ची गढ़ी बनाने के लिए सहमति प्रकट की थी। यह गढ़ी सिक्खों के लिए कई बार पनाह का स्थान सिद्ध हुई। १७४८ ई में पंथ खालसा नाम की जत्थेबंदी भी वैसाखी के दिवस पर ही तैयार की गई। यह जत्थेबंदी अपनी बहादुरी से जालिमों को सोधती हुई सिक्ख राज्य की स्थापना हेतु बुलंदियों तक जा पहुंची।

अंग्रेजी राज्य पंजाबियों के लिए फिर से संघर्ष का कारण बना। अंग्रेजों को भारत की धरती से उखाड़ने के लिए पुन: १९१९ ई की वैसाखी को जलियां वाला बाग में जलसा किया गया। निहत्थे पंजाबियों पर अंग्रेज जनरल ओडवायर ने गोलियों की वर्षा कर दी। हज़ारों लोग शहादत प्राप्त कर गए। इस घटना से प्रभावित होकर अपने देश के लिए मर-मिटने वाले देश-भक्तों ने हथियार उठा लिए तथा शहीदियां प्राप्त कीं। इनके जोश ने अंग्रेजों को भारत छोड़ जाने के लिए मज़बूर कर दिया।

गुरु-डंम (देहधारी गुरु-पूजा) की आड़ में उपद्रवी नकली निरंकारियों ने खालसा पंथ को चुनौती देने के लिए वैसाखी का दिवस ही चुना। इन्होंने १९७८ ई की वैसाखी को श्री अमृतसर में १३ सिंघ शहीद कर दिए। सिंघों के जोश ने ऐसे तत्वों को मिट्टी में मिला दिया ताकि आगे से ऐसी हरकतें करने की कोई हिम्मत न करे। पंथ में फूट डालने वालों की साजिशें धरी-धराई रह गईं।

१९९९ ई में खालसा पंथ का ३०० वर्षीय सृजना दिवस श्री अनंदपुर साहिब की धरती पर वैसाखी वाले दिन मनाया गया। इस अवसर पर 'सिक्ख विरासती संग्रहालय' बनाने की योजना बनाई गई। यह अजूबा पिछले वर्ष २०११ ई में तैयार होकर संगत को समर्पित हो चुका है, जो देश-विदेश की संगत को खालसा पंथ की चढ़दी कला को दर्शाता रहेगा।

आज हमें वैसाखी के दिवस पर आत्मविश्लेषण करने की जरूरत है; नयी योजनायें बनाने की जरूरत है। हमने अपनी विचारधारा का विश्व स्तर पर प्रचार करना है, पंथ-विरोधियों द्वारा प्रतिदिन बनाई जा रही साजिशों का मुकाबला करना है, अपने अलग स्वरूप के अस्तित्व को कायम रखना है; हमने अपने उच्च स्तर के फलसफे तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की बाणी की सेवा-संभाल के प्रति हो रहे हमलों का मुकाबला करना है; गुरबाणी के मनमर्ज़ी के अर्थ करके देहधारी गुरु-डंम का प्रचार करने वालों के विरुद्ध लामबंद होना है। इन समस्याओं का हल ढूंढने के लिए खालसा पंथ को सिर जोड़कर बैठना ही पड़ेगा; हमें अपने अमीर सभ्याचार तथा फ़लसफे पर डटकर पहरा देने के लिए पूर्वगामी योजनायें बनानी ही पड़ेंगी। इसके लिए हमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब से दिशा-निर्देश लेकर, भविष्य में नशों मादा-भ्रूण हत्या, पतितता तथा भ्रष्टाचार आदि के खातिमे के लिए गुरमति के अनुसार लामबंद होना पड़ेगा।

# श्री गुरु अंगद देव जी की बाणी में प्रभु की अवधारणा एवं संकल्प

*-डॉ. कृष्ण भावुक**

पंजाब में दस सिक्ख गुरु साहिबान की परंपरा में प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी के सर्वप्रथम शिष्य श्री गुरु अंगद देव जी ही थे, जिनके मूल नाम भाई लहिणा को गुरु जी ने 'अंगद देव' में बदल कर उनके प्रति अपने अपार प्रेम और स्नेह-भाव पर एक अमिट मुहर लगा दी थी, मानो वे उन्हें अपना अंग-रूप ही मानते थे। सिक्ख धर्म को स्थायी तौर पर बनाए रखने के लिए गुरु जी ने अपने इसी प्रमुख शिष्य भाई लहिणा जी को अपनी ज्योति देकर उनका नाम श्री गुरु अंगद देव रखा। इस घटना का वर्णन करते हुए गुरु-घर के कीर्तनकार भाई सत्ता-भाई बलवंड जी श्री गुरु ग्रंथ साहिब में फरमान करते हैं :

*लहणे दी फेराईऐ नानका दोही खटीऐ ॥*
*जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ॥*
*(पन्ना ९६६)*

भाई गुरदास जी भी अपने द्वारा रचित एक वार में यह लिखते हैं :

*गुरु अंगदु गुरु अंगु ते अंम्रित बिरखु अंम्रित फल फलिआ।*
*जोती जोति जगाईअनु दीवे ते जिउ दीवा बलिआ।*
*(वार २४:८)*

श्री गुरु नानक देव जी के ज्योति-जोत समाने के पश्चात् गुरिआई प्राप्त करने के बाद श्री गुरु अंगद देव जी खडूर साहिब आ गए। अब खडूर साहिब सिक्ख-धर्म का एक प्रमुख केंद्र बन गया। खडूर साहिब रहते हुए श्री गुरु अंगद देव जी ने 'गुरु नानक मिशन' की स्थापना की तथा धर्म के विकास के लिए प्रमुख योगदान दिया। उन्होंने गुरु नानक साहिब के बताए गए प्रमुख आदर्शों को निश्चितता और विशेषता प्रदान की। *(प्रिंसीपल तेजा सिंघ-डॉ. गंडा सिंघ, 'सिक्ख इतिहास', अनु. भगत सिंघ, पन्ना १८)*

श्री गुरु अंगद देव जी के लिए अपने जीवन में सिक्ख धर्म को विशेष रूप से आत्मनिर्भर बनाना एक प्रमुख लक्ष्य था। इससे भाव यह है कि सिक्ख धर्म में प्रवेश कर रहे सिक्खों को पुराने संस्कारों से मुक्ति दिलाकर उन्हें सिक्खी में परिपक्व करना। दूसरा, सिक्ख धर्म में प्रवेश कर रहे सिक्खों को परिपक्व करने के लिए उन्होंने वो समस्त योगदान किया, जो कि समकालीन धर्मों में नित्यप्रति के जीवन की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए आवश्यक और उपलब्ध था, ताकि सिक्खों को सम्पूर्ण जीवन जीने के लिए मुख्य आधार अपने प्रिय सिक्ख धर्म में ही प्राप्त हो सके। यद्यपि पूर्वोक्त सब आदर्शों के बीज श्री गुरु नानक देव जी ने ही बोए थे, तथापि इन बीजों को विकसित करने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष था। इन आदर्शों की पूर्ति के लिए श्री गुरु नानक देव जी की ही ज्योति श्री गुरु अंगद देव जी के रूप में संसार में प्रकट हुई थी।

गुरु साहिब के समय में सर्वत्र योगियों, जतियों, सन्यासियों, श्रमणों, ब्राह्मणों आदि का ही बोलबाला था। भारत में जो सबसे अधिक प्रभाव

**मकान नं. २६१, गली नं. ६, जुझार नगर, पटियाला-१४७००३, मो. ९८१५१-६५२१०*

देखने को मिल रहा था, उसमें वर्ण-व्यवस्था, वैराग्य, यज्ञ, बलि आदि हिंदू धर्म की जीवन-शैली के साथ-साथ बहुत-सी इसलामी धार्मिक क्रियाएं भी देखने में आ रही थीं। इन सभी ने भारत में आने वाले प्रत्येक धर्म के साथ-साथ प्रत्येक व्यक्ति को भी प्रभावित किया। सूफियों में संगीत और क़ब्र-पूजा इसी प्रभाव के ही प्रमाण माने जा सकते हैं। सिक्ख धर्म में प्रवेश के लिए तत्कालीन प्रचलित अनावश्यक विभिन्न रस्मों और रीति-रिवाजों से सिक्खों को दूर रखना अत्यंत आवश्यक था। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन-काल में इन रस्मों का न केवल निषेध ही किया, बल्कि इनको न अपनाने वाली एक बिलकुल नयी सिक्ख जीवन-शैली भी आरंभ की। श्री गुरु नानक देव जी के पश्चात् गुरगद्दी पर शोभायमान श्री गुरु अंगद देव जी ने भी उन सभी रस्मों से परहेज़ करने का उपदेश लोगों को किया, जिनकी मनाही पहले गुरुदेव ने की थी।

श्री गुरु अंगद देव जी ने तत्कालीन समाज में यह अनुभव किया कि व्यक्ति के जीवन का एक अभिन्न अंग होने के कारण धर्म का सब कहीं पर बहुत ही दुरुपयोग हो रहा है। समाज चार वर्णों में विभाजित हुआ है और प्रत्येक वर्ण से सम्बंधित लोगों ने अपना अलग-अलग धर्म निश्चित किया हुआ है। श्री गुरु अंगद देव जी ने समझाया कि समूचे संसार के लोगों का केवल एक ही धर्म परमात्मा को पाना है और जो इसी एक मार्ग पर चलता है, केवल वही सच्चा धर्मी होता है। गुरु जी ने इसी संदर्भ में फरमाया है:

*जोग सबदं गिआन सबदं बेद सबदं ब्राहमणह ॥*
*खत्री सबदं सूर सबदं सूद्र सबदं परा क्रितह ॥*
*सरब सबदं एक सबदं जे को जाणै भेउ ॥*
*नानकु ता का दासु है सोई निरंजन देउ ॥*
*(पन्ना ४६९)*

सिक्ख गुरुओं का पूरा जीवन हमें कुछ-न-कुछ उपयोगी और लाभकारिणी शिक्षा प्रदान करता है। उनके द्वारा लिखी बाणी से हमें ऐसी अच्छी शिक्षाएं प्राप्त हो जाती हैं, जो यदि हम अपने व्यवहार में लाएं तो हमारी पूरी जीवन-धारा ही बदलने की शक्ति हमारे भीतर आ जाती है। गुरुओं द्वारा जो आदेश हमें दिये गए हैं, उनमें भी शिक्षा के पर्याप्त अंश समाये हुए होते हैं। वास्तव में यदि यह कहा जाए कि गुरु का जीवन ही मानव-मात्र को शिक्षा प्रदान करने वाला हुआ करता है, तो यह कहना कुछ भी ग़लत या अतिश्योक्तिपूर्ण नहीं होगा। श्री गुरु अंगद देव जी के जीवन से हमें बहुत सारी शिक्षाएं मिलती हैं। इनमें परम प्रभु के साथ जीव-मात्र के सम्बंधों के विविध आयाम और मिलने वाली नैतिक शिक्षाओं का मानो भंडार ही भरा मिलता है। यहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज श्री गुरु अंगद देव जी की बाणी में प्रभु के सम्बंध में जो बातें कही गई हैं, उनसे जो शिक्षादायिनी बातें रेखांकित होती हैं, उन्हीं पर प्रकाश-प्रक्षेपण करना ही मुख्यत: इस लेख में अभीष्ट है और कुछेक शीर्षकों के अंतर्गत उन पर आगे सोदाहरण विचार किया जा रहा है।

*१. प्रभु के नाम-सिमरन की महत्ता :* श्री गुरु नानक देव जी की ही प्रेरणा-स्वरूप उनके परम शिष्य श्री गुरु अंगद देव जी प्रभु के नाम-सिमरन ही विशेष शिक्षा लौकिक जीवों को देते हैं :

*नानक दुनीआ कीआं वडिआईआं अगी सेती जालि ॥*
*एनी जलीईं नामु विसारिआ इक न चलीआ नालि॥*
*(पन्ना १२९०)*

*इकन्हा भाणै कढि लए इकन्हा माइआ विचि निवासु॥*
*एव भि आखि न जापई जि किसै आणे रासि ॥*
*नानक गुरमुखि जाणीऐ जा कउ आपि करे परगासु॥*
*(पन्ना ४६३)*

गुरु जी लोगों को पहले पहर से अर्थात् अमृत वेले से ही प्रभु का नाम-सिमरन करने का सदुपदेश देते हैं और उसके अनंतर दिन के शेष सात पहरों में भी सच्ची कमाई करने और नीर-क्षीर विवेक की सहायता से पाप-पुण्य में सारे जीवन में अंतर स्थापित करते रहने की भी सच्ची शिक्षा प्रदान करते हैं :

*चउथै पहरि सबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ ॥*
*तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ॥*
*ओथै अंम्रितु वंडीऐ करमी होइ पसाउ ॥*
*कंचन काइआ कसीऐ वंनी वड़ै चड़ाउ ॥*
*जे होवै नदरि सराफ की बहुड़ि न पाई ताउ ॥*
*(पन्ना १४६)*

श्री गुरु अंगद देव जी के मतानुसार प्रत्येक जीव के सुख तथा दुख दोनों ही परिस्थितियों में सदैव सेवा-विधियों के अनुसार प्रभु का नाम-जाप, कीर्तन, सेवा, ध्यान इत्यादि अधिक से अधिक करते रहना चाहिए। ऐसा करने से ही प्रभु के साथ उसका नित्य मिलन संभव हो सकता है। जीवात्मा का प्रभु से मिलन ही जीवन का अंतिम गन्तव्य, लक्ष्य अथवा सत्य कहलाता है। इसका कारण यह है कि इस शरीर का अंत शमशानघाट जाकर राख हो जाना हुआ करता है, जिसे फूंक मारो तो उड़ जाए। इसी प्रकार हमारी 'आत्मा' का अंतिम लक्ष्य भी परमात्मा का साक्षात करना, उसके साथ एकाकार हो जाना ही हुआ करता है। जब मरने के बाद उसी प्रभु के पास ही प्रत्येक जीव को जाना है, तब जीवित रहते हुए ही उसका पावन सिमरन करने में भला हमें कैसी लज्जा और संकोच हो! हम चाहे जितने अधिक पाखंड अथवा आडंबर कर-करा लें, प्रभु किसी भी स्थिति में बिना नाम-सिमरन किए हमसे कभी भी प्रसन्न नहीं हो सकते।

गुरु जी कहते हैं कि ईश्वर का नाम-सिमरन और उसके प्रति भक्ति-भाव प्रत्येक वर्ग के जीवों के सामान्य धर्म माने जा सकते हैं। इन धर्मों का निर्वाह करने वाला स्वयं परमात्मस्वरूप ही हो जाया करता है। अत: प्रभु का नाम-सिमरन करना प्रत्येक नश्वर जीव के लिए जीवन का एक अत्यंत आवश्यक कर्म माना जाता है :

*जपु तपु सभु किछु मंनिऐ अवरि कारा सभि बादि॥*
*नानक मंनिआ मंनीऐ बुझीऐ गुर परसादि ॥*
*(पन्ना ९५४)*

जो 'मनमुख' जीव भगवान के नाम-सिमरन की निंदा करता है, वह इस संसार में किसी अंधे व्यक्ति के समान ही व्यवहार करता है। प्रभु-नाम का सिमरन करना ही प्रत्येक जीव का परम कर्त्तव्य हुआ करता है।

*२. प्रभु ही संसार की सृजन-कला का ज्ञाता और प्रतिष्ठादाता :* श्री गुरु अंगद देव जी कहते हैं कि उस व्यक्ति का मानुषी जन्म तब तक पूरी तरह व्यर्थ ही रहता है जब तक वह ईश्वर अथवा सृष्टि के रचनाकार के सम्बंध में पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता। इस सृष्टि का रचनाकार ईश्वर ही है। यह सृष्टि भी उसी रचयिता के वश में है तथा अंतत: यह वही है, जिसने इस रचना की कला अथवा युक्ति केवल अपने पास ही रखी हुई है अर्थात् उस सृष्टा ने विश्व की रचना का ढंग किसी भी दूसरे को नहीं सिखाया है। यह कला या ज्ञान केवल उसी

एक अविनाशी परम तत्त्व के पास ही सुरक्षित या उस तक ही सीमित है, इसलिए हमको इस विश्व के सृष्टा का ही सदैव ध्यान रखना चाहिए, किसी दूसरे का नहीं:

*निहफलं तसि जनमसि जावतु ब्रहम न बिंदते।*
*सागरं संसारसि गुर परसादी तरहि के।*
*करण कारण समरथु है कहु नानक बीचारि।*
*कारणु करते वसि है जिनि कल रखी धारि ॥*

*(पन्ना १४८)*

केवल एक अकेले प्रभु की कृपा से जीव को इस जग में पूर्ण प्रतिष्ठा मिला करती है, अन्यथा नहीं। जिस प्रकार आग को पाले का, सूर्य को रात का, चांद को अंधेरे का, पवन को पानी का और धरती को किसी अन्य पदार्थ का मुखापेक्षी अर्थात् मुहताज नहीं होना पड़ता है और न ही किसी से भयभीत होना पड़ता है, ठीक उसी प्रकार प्रभु की कृपा से जीव ऐसी आत्मनिर्भरता वाली हैसियत या सत्ता पा लिया करता है, जैसी कि स्वत:पूर्ण इस धरती की भी देखी जाती है।

*३. प्रभु के प्रति जीव की समर्पणशीलता ही प्रणिधान :* प्रभु के शीघ्र मिलन में 'भाव' ही एक प्रधान साधन हुआ करता है। इस संसार में क्रिया की अपेक्षा 'भाव' ही प्रधान है। छोटी से छोटी क्रिया भी हमें किसी अनचाहे भाव की प्रधानता से मुक्ति दे सकती है और उत्तम क्रिया निम्न श्रेणी का भाव होने पर हमें रसातल में ले जाती है।

डॉ. गणेशदत्त सारस्वत का यह विचार उल्लेखनीय है, "तन, मन, बुद्धि और अंत:करण को भगवान को अर्पण करना और फिर अंत:करण से या भगवद्-प्रेरणा से कर्म करना ही अनासक्त-भाव है। अनासक्त-भाव ही समर्पण-भाव है। यही ईश्वर-प्रणिधान है। ईश्वर-प्रणिधान का अर्थ है ईश्वर को अपना सर्वस्व अर्पण कर देना। जो ईश्वर को आत्मसमर्पण कर देगा, वह ईश्वर का ही सतत चिंतन करेगा।

*('दैनिक जागरण', १८ जुलाई, सन् २०११, शीर्षक-- समर्पण भाव, पृष्ठ ६)*

गुरु जी अत्यंत विनम्र होकर प्रभु के आगे सिर झुकाकर पूर्ण समर्पण-भाव से उसकी भक्ति करने का ही सदुपदेश करते हैं, यथा :

*जो सिरु सांई ना निवै सो सिरु दीजै डारि ॥*
*नानक जिसु पिंजर महि बिरहा नही सो पिंजरु लै जारि ॥*

*(पन्ना ८९)*

यहां गुरु जी का स्वर प्रखर इसलिए है, क्योंकि उनका यह दृढ़ विचार है कि जिस जीव की देह में प्रभु का वियोग-भाव न हो, उसे तो ले जाकर जला ही देना चाहिए। इससे उनके मतानुसार उस परम प्रभु के प्रति जीव का बिना शर्त समर्पण का महत्त्व स्वत: सिद्ध हो जाता है।

*४. प्रभु की चाटुकारिता और आलोचना, दोनों ही अनुचित :* श्री गुरु अंगद देव जी कहते हैं कि प्रभु अपने भक्त से सर्वोत्मना अर्थात् समपर्ण चाहता है। उसके एकनिष्ठ भक्त को सदैव उसकी 'रज़ा' में राज़ी रहना तथा उसके दिए प्रत्येक सुख-दुख को बिना आपत्ति किए हृदय से सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। इस संसार में जीव अपने ईश्वर को प्राय: झुककर प्रणाम तो करता है, साथ ही उसके द्वारा किए गए कर्मों पर जब-तब अनुचित टीका-टिप्पणी भी करता रहता है। ऐसे दिग्भ्रमित जीव के बारे में हमें केवल यही समझना चाहिए कि वह मूर्ख और

मनमुखी जीव प्रभु के सच्चे पथ को अपने हाथ से खोता जा रहा है। ऐसी विनम्रता और आलोचना दोनों ही बातें झूठी हैं, क्योंकि प्रभु के दरबार में इन दोनों ही बातों से रसाई अर्थात् पहुंच कभी सहज और सम्भव नहीं होती। भगवान न तो चरम सीमा की कोई चापलूसी चाहता है और न ही उसे अपने किए गए कामों में अकारण और व्यर्थ ही मीन-मेख निकाले जाना अच्छा लगता है। श्री गुरु अंगद देव जी भी प्रभु का सच्चा प्रेमी केवल उसी जीव को मानते हैं जो इस प्रकार के सभी लेखों से ऊपर या परे रहता है :

*आसकु एहु न आखीऐ जि लेखै वरतै सोइ ॥*

*(पन्ना ४७४)*

सतिगुरु का अपने सच्चे शिष्य पर भी ऐसा ही भावपरक प्रभाव पड़ा करता है, जैसा कि श्री गुरु अंगद देव जी की दास्य-भाव की प्रेमा-भक्ति में दीख पड़ता है। जो जीव प्रभु की एक ओर तो वंदना-प्रणाम (प्रणति) आदि करते हैं, साथ ही उसके अस्तित्व के सम्बंध में व्यर्थ के सवाल-जवाब भी करते रहते हैं, उनकी ऐसी दिखावटी भक्ति और विरोध-भावना (टीका-टिप्पणी) दोनों ही बातें झूठी मानी जाएंगी। ऐसी मूर्खता करने से वे जीवन का सार-तत्त्व भी सदैव अपनी गांठ से गंवा बैठते हैं :

*सलामु जबाबु दोवै करे मुंढहु घुथा जाइ ॥*
*नानक दोवै कूड़ीआ थाइ न काई पाइ ॥*

*(पन्ना ४७४)*

यही बात वर्तमान काल के कर्मचारियों के सम्बंध में भी पूर्णत: चरितार्थ होती है। श्री गुरु अंगद देव जी काम-धंधों में होने वाले अनेक प्रकार के निरर्थक विवादों से बचने-बचाने की भी लाभकारिणी और सदुपयोगी शिक्षाएं देते हैं, जो कि आज के मानव के लिए अत्यंत प्रासंगिक और समयसंगत अनुभव भी है।

गुरु जी जीव के लिए जीवन में सदैव प्रभु के नि:स्वार्थ गुणगान को अधिक महत्त्व देते हैं:

*करता सो सालाहीऐ जिनि कीता आकारु ॥*
*दाता सो सालाहीऐ जि सभसै दे आधारु ॥*

*(पन्ना १२३९)*

५. प्रभु की रज़ा, भाणे या हुक्म में पूर्ण आस्था: ईश्वर की भक्ति या स्तुति करना और केवल उसी से प्रेम करना तथा उसके दिए गए प्रत्येक सुख-दुख को अपना सिर झुकाकर और प्रसन्नचित्त स्वीकार करना ही उसके एक सच्चे भक्त और प्रेमी के दो प्रमुख लक्षण होते हैं। हमें प्रभु-प्रेम के लिए उसके प्रति पूरी एकनिष्ठता और उसकी इच्छा (रज़ा) को सहर्ष स्वीकार करते रहने की दोनों शर्तें अवश्य पूरी करके एक वास्तविक प्रभु-भक्त बनना चाहिए, क्योंकि इसी में हमारे सारे जीवन का कल्याण छिपा हुआ होता है। श्री गुरु अंगद देव जी का वचन है :

*जां सुखु ता सहु राविओ दुखि भी संम्हालिओइ॥*
*नानकु कहै सिआणीए इउ कंत मिलावा होइ ॥*

*(पन्ना ७९२)*

श्री गुरु अंगद देव जी के मतानुसार हमें अपने जीवन में भगवान की इच्छा (रज़ा, भाणा) को स्वीकारना चाहिए। उसकी इच्छा के बिना इस नश्वर संसार में कोई भी कार्य कभी भी सम्भव नहीं होता। परमात्मा हमें जैसी भी अच्छी-बुरी स्थिति में रखे, हमें उसे उसकी निजी इच्छा मानकर चुपचाप स्वीकार कर लेना चाहिए। हमें जग में आकर जो भी प्राप्त होता है, वह प्रभु की इच्छा और कृपा के ही कारण होता है। उसकी इच्छा के बिना इस संसार में एक पत्ता तक नहीं हिल सकता। जो

कुछ भी हो रहा है, जो कुछ भी हो चुका है तथा जो कुछ भी भविष्य में होगा, उसे उस अविनाशी प्रभु के अतिरिक्त कोई नहीं जानता तथा यह सब उसी की इच्छा से ही होता चला आया है, हो रहा है तथा आगे भी होता जाएगा। भगवान की जैसी इच्छा होगी, हमें वैसा ही फल मिलेगा। हमें उसकी हर बात स्वीकार करनी चाहिए; कभी भी उसकी इच्छा का विरोध नहीं करना चाहिए। यदि हमें कोई दुख होता है, तो भी उसे प्रभु-इच्छा ही मानकर हमें उसे बिना कोई भी संकोच किए सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए और भगवान से उस दुख को सहने की शक्ति मांगनी चाहिए। इसके विपरीत जब हम सुख की अवस्था में होते है तब भी हम इसे भगवान का दिया सुख मानकर खुले दिल से उसका धन्यवाद करना चाहिए। उसकी इच्छा में हमें किसी भी प्रकार की मीन-मेख निकालने का कभी कोई प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

गुरबाणी में प्रभु की इच्छा को हुक्म, रज़ा, भाणा आदि शब्दों से भी व्यक्त किया गया है। गुरु जी 'हुक्म' का स्वरूप बताते हुए इसकी ये व्याख्याएं प्रस्तुत करते हैं :

*हुकमु साजि हुकमै विचि रखै हुकमै अंदरि वेखै॥*
*नानक अगहु हउमै तुटै तां को लिखीऐ लेखै॥*
*(पन्ना १२४३)*

*दुहा सिरिआ आपे खसमु वेखै करि विउपाइ ॥*
*नानक एवै जाणीऐ सभ किछु तिसहि रजाइ ॥*
*(पन्ना १४८)*

*एह किनेही दाति आपस ते जो पाईऐ ॥*
*नानक सा करमाति साहिब तुठै जो मिलै ॥*
*(पन्ना ४७४)*

प्रभु की आलोचना अथवा निंदा करने की अपेक्षा उसका गुणगान करते रहने से ही जीव को उसके 'हुक्म' अथवा 'रज़ा' में ही चलना और हर प्रकार का आचरण-व्यवहार करने का ढंग पता चल जाया करता है :

*साहिब सेती हुकमु न चलै कही बणै अरदासि॥*
*कूड़ि कमाणै कूड़ो होवै नानक सिफति विगासि॥*
*(पन्ना ४७४)*

जो जीव प्रभु के 'हुक्म' की उपेक्षा करता है, वही आंखें होने पर भी 'अंधा' हुआ करता है :

*सो किउ अंधा आखीऐ जि हुकमहु अंधा होइ ॥*
*नानक हुकमु न बूझई अंधा कहीऐ सोइ ॥*
*(पन्ना ९५४)*

६. लौकिक और भक्तिमूलक कामों में अंतर : *वास्तव में, इस दुनिया के काम से 'भक्ति' का काम-काज इस अर्थ में अलग रहता है कि इसमें न तो कोई तथाकथित सौदा किया-कराया जाता है और न ही स्थूल रूप में सबकी आंखों के सामने कोई लेन-देन ही घटित हुआ करता है। इतना ही नहीं, इसमें किसी प्रकार के अनुचित हठ और कृपणता (कंजूसी) से भी कभी कोई काम नहीं लिया जाता है :*

*ओथै हटु न चलई ना को किरस करेइ ॥*
*सउदा मूलि न होवई ना को लए न देइ ॥*
*(पन्ना ९५५)*

यहां बिना कारण के ही 'कार्य' सम्पन्न होते रहने के कारण 'विभावना' नामक अर्थालंकार की भी स्थिति मानी जाएगी :

*दिसै सुणीऐ जाणीऐ साउ न पाइआ जाइ ॥*
*रुहला टुंडा अंधुला किउ गलि लगै धाइ ॥*
*भै के चरण कर भाव के लोइण सुरति करेइ॥*
*नानकु कहै सिआणीए इव कंत मिलावा होइ ॥*
*(पन्ना १३९)*

७. *प्रभु-भक्ति जीव के लिए अनिवार्य :* श्री गुरु अंगद देव जी ने अपनी बाणी में सर्वत्र ईश्वर-भक्ति की अनिवार्यता पर बल दिया है। गुरु जी

ने कहा है कि यह मानव-जन्म हमें अन्य योनियों की एक बहुत लंबी यात्रा की प्रक्रिया भोगने के बाद प्राप्त हुआ है। न जाने हम किस-किस योनि को पार करते हुए यहां इस मानव-रूप तक पहुंच पाए हैं। एक फ़ारसी कथन या कहावत 'अश्रफुलमख़्लूकात' के अनुसार, " मानव ही इस संसार में सर्वश्रेष्ठ प्राणी है।" जब हमें दयालु ईश्वर की कृपा से ऐसी मानवी देह मिल गई है तो हमें सदैव ऐसे उपाय करने चाहिए, जिनसे अपने मरने के बाद हमें सदा के लिए जन्म-मरण के क्रूर और अनिच्छित बंधन से मुक्ति (मोक्ष) ही मिल जाए। हम अपने जीव-रूप के रहते हुए कभी कहीं कोई ऐसा गलत काम न कर बैठें, जिससे हमें फिर से चौरासी लाख योनियों के असहनीय चक्कर या फेर में भटकने के लिए विवश होना पड़ जाए। जब उस परमेश्वर ने हमारे पिछले जन्म के कर्मों से प्रसन्न होकर इस मानवीय योनि में हमें इतना सुंदर शरीर प्रदान किया है, जिसमें पशुओं, जीव-जंतुओं आदि अन्य प्राणियों से हमें अलगाने वाली सोचने-समझने की पार्थक्याश्रयी अद्भुत और श्रेष्ठ क्षमता है, तब प्रभु के इस परम उपकार के प्रतिकारवश हमें सदैव उसकी भक्ति करनी चाहिए। गुरु जी का विचार है कि जिन जीवात्मा-रूपी स्त्रियों के घर में प्रभु-रूपी 'पति' रहते हैं, केवल वही सच्ची 'सुहागिनें' कहलाती हैं, अन्य तो रात-दिन केवल अपने आप में जलती हुई इधर से उधर घूमती रहती हैं :

*सावणु आइआ हे सखी जलहरु बरसनहारु ॥*
*नानक सुखि सवनु सोहागणी जिन्ह सह नालि पिआरु ॥*

*(पन्ना १२८०)*

*नानक तिना बसंतु है जिन्ह घरि वसिआ कंतु॥*
*जिन के कंत दिसापुरी से अहिनिसि फिरहि जलंत॥*

*(पन्ना ७९१)*

श्री गुरु अंगद देव जी प्रभु के प्रति प्रेम और भक्ति का परम आदर्श कुछ इस प्रकार से स्थापित करते हैं :

*जिना भउ तिन्ह नाहि भउ मुचु भउ निभविआह॥*
*नानक एहु पटंतरा तितु दीबाणि गइआह ॥*

*(पन्ना ७८८)*

७. निष्कर्ष : समग्रत: हम इस निष्कर्ष का प्रतिपादन कर सकते हैं कि श्री गुरु अंगद देव जी के मतानुसार हमें उठते-बैठते, सोते-जागते, खाते-पीते सदैव ईश्वर को याद करते रहना चाहिए तथा जहां तक सम्भव हो सके, उस परम तत्त्व की निरंतर भक्ति भी करते रहना चाहिए। सच तो यह है कि यह संसार एक झूठी 'माया' का ही खेल या पसारा है और सब कुछ इसी माया के अधीन हुआ करता है। हमें अपने रिश्ते-नातों को दूर रखते हुए भगवान-भक्ति ही अनिवार्य रूप से करनी चाहिए। जो जीव मानव-जन्म में भी भगवान की भक्ति नहीं कर पाता अथवा जान-बूझ कर नहीं करता, उससे बड़ा मूर्ख जीव भला और कौन होगा? हम सभी को प्रभु-भक्ति अनिवार्य रूप से करनी चाहिए, क्योंकि न जाने हमें कब यह शरीर छोड़कर परलोक जाना पड़ जाए। श्री गुरु अंगद देव जी जीवों को समझाने के स्वर में कहते हैं कि भगवान की भक्ति निरंतर करते रहो, उसे सदैव जपते रहो, कहीं ऐसा न हो जाए कि मोक्ष-प्राप्ति का यह अवसर सदा के लिए तुम्हारे हाथ से जाता रहे और तुम्हारे लिए अपने हाथ मलने के सिवा कोई और चारा शेष न रह जाए।

# मानव जीवन-मूल्यों के संरक्षक : शेख़ फरीद जी

*-डॉ. निर्मल कौशिक**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज की संरचना भी मानव समूह के ही अस्तित्व से होती है। सामाजिक धरातल को सुदृढ़ करने हेतु वह कुछ जीवन-मूल्य निर्धारित करता है। जैसे-जैसे समाज विकास के मार्ग पर अग्रसर होता है, जीवन-मूल्यों में परिवर्तन होता रहता है। कुछ जीवन मूल्य शाश्वत् होते हैं जो हर युग, हर परिस्थिति में वहीं रहते हैं, यथा इसी आशय से सम्बंधित जीवन-मूल्यों की चर्चा शेख़ फरीद जी की बाणी में भी उपलब्ध है। वे फरमाते हैं :

*बोलीऐ सचु धरमु झूठु न बोलीऐ ॥*
*जो गुरु दसै वाट मुरीदा जोलीऐ ॥*

*(पन्ना ४८८)*

इसी प्रकार श्री गुरु नानक देव जी ने भी सामाजिक जीवन-मूल्यों की बात कही। उन्होंने कहा--"किरत करो, नाम जपो, वंड छको।" इसी से मानव जीवन मूल्यवान बनता है। मानव जीवन को मूल्यवान और सार्थक बनाने के लिए अनेक गुरुओं, पीरों, पैगंबरों, संतों, भक्तों और साधकों ने अपने-अपने ढंग से जीवन-मूल्यों को जीवन में धारण करने पर बल दिया।

जीवन-मूल्यों का सीधा सम्बंध मानव जीवन से है। जीवन को सुचारू ढंग से चलाने के लिए जीवन-मूल्यों के संरक्षण की भी आवश्यकता है। इसी के संरक्षण हेतु समय-समय पर अनेक ज्ञानवान महापुरुषों ने भरसक प्रयास किए और अपनी बाणी के माध्यम से जनता का मार्ग प्रशस्त किया। इन जीवन-मूल्यों के अभाव में मानव समाज की सृष्टि और विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मानव जीवन को मूल्यवान बनाने वाला प्रत्येक मूल्य मानव की चिंतन-प्रक्रिया और संवेदनाओं का द्योतक है। मानवीय संवेदनाएं ही इन मूल्यों को संचालित और पोषित करती हैं। मानवीय जीवन-मूल्यों से भाव है-- मानव समाज के अंतर्गत मानव समाज के विकास हेतु सकारात्मक जीवन-मूल्य। 'मानव' का अर्थ यहां व्यक्ति विशेष न होकर समाज सापेक्ष है। मानवीय जीवन-मूल्य से अभिप्राय समाज द्वारा स्वीकृत जीवन-मूल्य है। वास्तव में मानवीय जीवन-मूल्य मानव-मूल्य ही हैं। काल, स्थान और आवश्यकता के अनुरूप ही किसी व्यक्ति या वस्तु का मूल्य निर्धारित किया जाता है।

विश्व में सृष्टा की सबसे मूल्यवान कृति मानव ही है और मानव के लिए उसका जीवन। विवेकशील होने के कारण ही इसे सभी जीवों में श्रेष्ठतम प्राणी कहा गया है। आम धारणा है कि भोजन, निद्रा, भय और मैथुन, ये सभी क्रियाएं पशुओं और मनुष्यों में समान रूप में होती है। केवल विवेक (ज्ञान) के कारण ही मनुष्य सभी जीवों में विशिष्ट है। विवेक से रहित मनुष्य तो पशु के समान है।

जैसा कि पहले कहा गया है कि मूल्य काल और स्थान-सापेक्ष होता है। अत: मूल्य एक

**१६३, आदर्श नगर, ओल्ड कैंट रोड, फरीदकोट (पंजाब)-१५१२०३, मो. ०१६३९-२६३०१७*

गतिशील एवं परिवर्तनशील अवधारणा है। मूल्य शब्द संस्कृत की मूल धातु से यत् प्रत्यय जुड़कर बना है, जिसका अर्थ है किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन, दाम अथवा बाज़ार दर। यह शब्द अंग्रेजी के 'वैल्यू' शब्द के अर्थ के रूप में प्रयुक्त होता है। जब यह अर्थ वस्तुवाद से निकल कर व्यक्तिवादी और समाजवादी हो गया तो लोगों ने मानव जीवन के महत्त्व को मूल्यों की दृष्टि से देखना शुरू किया। मानव जीवन की महत्ता को इन मूल्यों के तराजू पर तोला जाने लगा। मानव जीवन की उन्नति के लिए इन मूल्यों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। समाज में धर्म, नैतिकता, सदाचार और सद्गुणों का प्रचार-प्रसार आरंभ हो गया। मानवीय जीवन में शाश्वत मूल्यों की स्थापना होने लगी। साधक मानव जीवन का अंतिम लक्ष्य पाने में लग गए। सृष्टि का रहस्य, आत्मा-परमात्मा-- सम्बंध, जड़ और चेतन सभी क्षेत्रों में मानव की दृष्टि पहुंचने लगी। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार 'मूल्य' शब्द वस्तुतः नीतिशास्त्रीय 'वैल्यू' का पर्याय है। अर्थशास्त्र में वह बाज़ार दर के अर्थ में विनिमय के एक-एक आवश्यक प्रतिमान के अर्थ में प्रयुक्त होता है। साहित्य-शास्त्र में 'मूल्य' शब्द समाज-कल्याण या मानवहित वाले व्यापक अर्थ में प्रयुक्त होता है। स्वार्थ से ऊपर उठकर जो व्यक्ति, विचार, धारणा, सिद्धांत, मानव समाज के लिए उपयोगी हो, वही मूल्यवान है। कोई मानव समाज के लिए कितना उपयोगी है, यह उसके जीवन में निर्धारित मूल्यों (नैतिक गुणों) से ही पता चलता है। मानवीय जीवन-मूल्य वे हैं जो मानव को सदाचार और सदगुणों से परिपूर्ण करते हैं।

मनुष्य के सदगुण अथवा उसका आचरण ही उसके नैतिक गुणों की कसौटी है। सकारात्मक गुण संरचना की ओर ले जाने वाले तथा नकारात्मक गुण विध्वंस की ओर ले जाने वाले होते हैं। इसी से मानव जीवन का मूल्य और अवमूल्य निर्धारित होता है। इसी के आधार पर मनुष्य के व्यक्तित्व का आंकलन होता है। मनुष्य कितना ज्ञानवान है, विवेकशील है, यह निर्णय भी उसके जीवन में निर्धारित मूल्य ही करते हैं।

पंजाबी भाषा में इन मानवीय जीवन-मूल्यों को 'मनुक्खी कदरां-कीमतां' कहा गया है। कीमत तब होती है जब कद्र (सम्मान) उपयोगी हो, मूल्यवान (कीमती) भी हो।

इसी संदर्भ में जब हम सूफी परंपरा की चिश्ती संप्रदाय के प्रसिद्ध सूफी संत शेख़ फरीदुद्दीन गंज-ए-शकर (जिन्हें पंजाबी का प्रथम कवि कहा जाता है) की बात करें तो उनकी बाणी में स्थान-स्थान पर इन मानवीय जीवन-मूल्यों की बात कही गई है। बार-बार मनुष्य को इन मानवीय जीवन-मूल्यों के हनन से सचेत रहने के लिए कहा गया है। उन्होंने मनुष्य को अपना सामाजिक अस्तित्व स्थापित कर जन-कल्याण हेतु सादा जीवन जीने की ओर प्रेरित किया है। सामाजिक विषमता दूर करने हेतु संग्रह की भावना से मुक्त रहने तथा दूसरे की उन्नति, धन-दौलत देख ईर्ष्या न करने का परामर्श भी दिया है। उनके अनुसार:

*रुखी सुखी खाइ कै ठंढा पाणी पीउ ॥*
*फरीदा देखि पराई चोपड़ी ना तरसाए जीउ ॥*

*(पन्ना १३७९)*

समाज में फैली विषमता के कारण गरीब और अमीर के बीच की खाई बढ़ती जा रही

है। मानवीय धरातल पर हमें दूसरों की आवश्यकताओं का भी ध्यान रखना चाहिए। दूसरों का हक मारना हराम कहा जाता है। श्री गुरु नानक देव जी की मलिक भागो और भाई लालो वाली घटना से भी यही सिद्ध होता है कि गरीबों का शोषण करने वाले मानो उनके रक्त से बना भोजन खाते हैं और किरत-कमाई करने वाले मानो 'दूध' से बना भोजन खाते हैं। शेख़ फरीद जी भी कहते हैं :

*फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख ॥*
*जिना खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥*

*(पन्ना १३७९)*

दूसरों के लिए प्रेम और त्याग की भावना से जीवन-यापन करने वाला मनुष्य किसी को बड़ा या छोटा नहीं समझता। उसके लिए राजा-रंक सभी समान हैं। मानवीय जीवन-मूल्यों ने समाज में गुरमति के आलोक में समाज को एक धरातल पर लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। छोटे से छोटा जीव भी आपके जीवन में महत्त्वपूर्ण हो सकता है, अत: किसी से भी घृणा मत करो, सब जीवों से प्रेम करो। तुच्छ से तुच्छ प्राणी से भी सहानुभूति और सहयोग की भावना रखनी चाहिए। शेख़ फरीद जी ने इसके लिए बहुत ही सटीक उदाहरण प्रस्तुत कर मनुष्य को समझाने का प्रयास किया है। शेख़ फरीद जी मिट्टी को भी महत्वपूर्ण मानकर उसकी निंदा न करने की सलाह देते हुए कहते हैं :

*फरीदा खाकु न निंदीऐ खाकू जेडु न कोइ ॥*
*जीवदिआ पैरा तलै मुइआ उपरि होइ ॥*

*(पन्ना १३७८)*

दूसरों के अवगुणों को देखना और स्वयं के गुणों का बखान करना मानवीय दुर्बलता ही कही जाएगी, लेकिन हमें स्वयं के विषय में भी चिंतन करना चाहिए; अपने अवगुणों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। आत्मविश्लेषण करना स्वयं के लिए ही लाभदायक होगा। इस दृष्टि से अपने मन की शुद्धि और बुराई से बचने के लिए निंदक को अपने निकट रखना उपयोगी रहेगा। अहम् मनुष्य को अंधा बना देता है उसे अपने सिवा कुछ भी दिखाई नहीं देता। इसके विपरीत अहम् को दूर कर हमें दूसरों के प्रति सदभाव रखना चाहिए। स्वयं को बड़ा मानने वाला अभिमानी तो हो सकता है लेकिन महामानव नहीं बन सकता। आत्मालोचन और आत्मविश्लेषण से मनुष्य मानव से महामानव बन सकता है। इससे मनुष्य स्वयं के गुणों को नहीं अपितु अवगुणों को देखेगा और उन्हें दूर करने का प्रयास भी करेगा। मानवीय जीवन-मूल्यों की जीवन में यही सार्थकता है कि वे मनुष्य को सद्गुणों की ओर प्रेरित करते हैं और जीवन को मात्र समाज के लिए मूल्यवान बनाते हैं। शेख़ फरीद जी ने अपनी बाणी के माध्यम से इन मानवीय जीवन-मूल्यों के संरक्षण हेतु नैतिकता पर बल देने का भरसक प्रयत्न किया है। उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर सरलता, विनम्रता, मधुरता जैसे गुणों को धारण करने पर बल दिया है। इससे मानव के अंदर स्वयं को समझने और आत्म-विश्लेषण करने की क्षमता बढ़ती है। शेख़ फरीद जी अपनी बाणी में कहते हैं :

*फरीदा जे तू अकलि लतीफु काले लिखु न लेखु ॥*
*आपनड़े गिरीवान महि सिरु नीवां करि देखु ॥*

*(पन्ना १३७८)*

शेख़ फरीद जी ने मनुष्य को उन कर्मों को न करने की सलाह दी है जिनके करने से

जीव को ईश्वर के सम्मुख शर्मिंदा होना पड़े। उनके अनुसार मनुष्य को समाजोपयोगी, सार्थक, संरचनात्मक और सम्मान बढ़ाने वाले कार्यों में ही प्रवृत्त होना चाहिए, अन्यथा इहलोक और परलोक दोनों में ही निंदा होती है। अगर मनुष्य सकर्म करेगा, सत्य के मार्ग पर चलेगा तो निश्चय ही उसे ईश्वर के सम्मुख शर्मिंदा नहीं होना पड़ेगा। उसका आचार-व्यवहार स्वत: शिष्टतापूर्ण और मानवीय होगा। मानव दुर्गुणों को छोड़ सद्‌गुणों की ओर अग्रसर होगा। इससे मानव समाज में मानवीय जीवन-मूल्यों की स्थापना को बल मिलेगा। शेख़ फरीद जी ने इस बात को अपनी बाणी में इस प्रकार स्पष्ट किया है :

*फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥*
*मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥*

*(पन्ना १३८१)*

शेख़ फरीद जी की बाणी मानव समाज का प्रकाश-स्तंभ है, जीवन-मूल्यों के प्रति सचेत करने का संकेत है। इस संसार में सभी अपने-अपने कर्मों के अनुसार दुख भोग रहे हैं; सुख केवल ईश्वर के नाम-सिमरन में है। सच्ची शांति ईश्वर के चरणों में मन लगाने से प्राप्त होती है।

मानव अपने विकारों के कारण ईश्वर का नाम-सिमरन नहीं कर पाता। इसके अभाव में उसका अमूल्य मानव जीवन बेमोल ही चला जा रहा है, नष्ट हो रहा है। अंतिम परिणाम तो मृत्यु ही है। इससे कोई नहीं बच सकता, इसलिए इस जीवन को मूल्यवान बनाकर समाज और मानव-सेवा के प्रति समर्पित कर देना चाहिए। शेख़ फरीद जी मानव को सावधान करते हुए कहते हैं :

*बुढा होआ सेख़ फरीदु कंबणि लगी देह ॥*
*जे सउ वर्हिआ जीवणा भी तनु होसी खेह ॥*

*(पन्ना १३८०)*

जब-जब मानवीय जीवन-मूल्यों का ह्रास हुआ तब-तब मानव समाज पतन की अवस्था को प्राप्त हुआ। मानव को ऐसी विकट स्थिति से उबारने के लिए हमारे गुरुओं, पीरों, संतों, भक्तों ने बाणी-रचना कर मानव का अज्ञान-अंधकार नष्ट कर उसे मानव समाज के लिए उपयोगी जीवन-मूल्यों की स्थापना की ओर प्रवृत्त किया। शेख़ फरीद जी ने भी बाणी की रचना कर मानव-कल्याण का पथ आलोकित किया। लक्ष्य से भ्रष्ट मानव समाज को मानव-मूल्य के विघटन से हटाकर नैतिक मूल्यों की स्थापना की। यही सद्‌साहित्य की पहचान है। उनकी अमर बाणी इन्हीं गुणों के कारण श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सुशोभित है। सच्चा साधक अथवा मार्गदर्शक वही होता है जो मानव समाज के हित की बात सोचता है, समाज के उत्थान की बात करता है। इसके लिए मानवीय जीवन-मूल्यों का संरक्षण आवश्यक है, तभी ईश्वरीय साधना और लक्ष्य-प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा। शेख़ फरीद जी की बाणी के इस विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि शेख़ फरीद जी की बाणी मानवीय जीवन-मूल्यों का संरक्षण करने हेतु सशक्त व सक्षम बाणी है। इसका प्रत्येक शब्द गुरु-मंत्र के समान वरणीय है। मानव-कल्याण हेतु इसे जीवन में धारण करने से ही मानवसमाज का कल्याण हो सकेगा।

# खालसा पंथ की साजना : एक करिश्मा 'श्री गुर पंथ प्रकाश' के विचारानुसार

-डॉ. जगजीत कौर*

"*सिंघन पायो राज किम, औ दीनो किन पातसाहु।३३।*" क्या यह एक विचित्र करिश्मा नहीं लगता? क्या यह संपूर्ण विश्व की शक्तिशाली राज्य-सत्ता को चौंका देने वाली चुनौती नहीं है? इसी चुनौती को देने वाले और अत्यंत शौर्य से विपक्षी दल का सामना करने वाले अदम्य साहसपूर्ण शेर सिंघों का इतिहास जानने की उत्सुकता हुई सर डेविड आक्टर लोनी को, जो ब्रिटिश सत्ता-काल में अम्बाला और लुधियाना का पोलिटिकल रेजीडेंट था और दिल्ली द्वारा निर्देशित राज-कार्यों को संभालता था। तब उसने ही कैप्टन मरे, जो लुधियाना स्थित ब्रिटिश कंपनी का फौजी डॉक्टर था, को प्रेरित कर पंजाब के सिंघों से इतिहास जानने की प्रेरणा दी, जिसका जवाब उसे मिला पंथ-रतन शहीदों के परिवार से गहरा सम्बंध रखने और स्वयं शहीद, काव्य शिरोमणि स. रतन सिंघ (भंगू) से।

वो शक्तिशाली मुगल-सत्ता, जिसने शताब्दियों तक संपूर्ण महाद्वीप, उपमहाद्वीप, कई पृथ्वी-खंडों, विशाल फैले समुद्रों, जल-खंडों, जजीरों पर अपना प्रभुत्व जमा रखा हो, उस ज़ालिम खूंखार दानवी शाक्ति को चैलेंज कर वृहत पंजाब में सिंघों का बोलबाला होना आश्चर्य का विषय तो है ही। साधारण-सी रैय्यत, जो बात-बात में आततायी सत्ता के सामने घुटने टेकती रही; जो अपनी बहू-बेटियों की इज्जत की भी रक्षा करने में असमर्थ रही, उन कमज़ोर, बुज़दिल, दबे-घुटे लोगों में शक्ति आई कहां से? मुगल कुचले कैसे गए?

*किम कर जट्टन शाहि सूबे मारे।*
*शाहि रय्यत ते किम कर हारे?*

अवश्य कोई करामात हुई है :

*छेलीअन मारे शेर किम, बटेरन मारे बाज। हाकम मारे रैय्यतें, यह करामातहिं काज।*

क्या खालसा पंथ इतना बलशाली होकर उभरा कि उसने हाकिमों को मार गिराया? निरीह मेमनों ने शेरों को मार दिया? बटेरों ने बाजों को मार गिराया?

*है इन महि किछु शकत बल कै किम डाढे पंथ?*

*लिखो हकीकत इन सभौ तो यह पाईए अंत।*

तब कैप्टन मरे ने पूछा :

*तौ माली नै हम कहयो इतनी बात बताहु। सिंघन पायो राज किम, औ दीनो किन पातसाहु ॥३५॥*

सिंघों ने अपना राज्य कैसे स्थापित किया? किस बादशाह के ये उत्तराधिकारी थे? किस बादशाह के ये वारिस थे? विरासत में किस बादशाह ने इन्हें राज्य दिया? 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में उत्तर है :

तिसै बात मैं ऐसे कही, सिंघन पातिशाही साहि सच्चै दई।

सिंघों को पातशाही (बादशाही) सच्चे पातशाह ने दी है :

*मरी कहयो शाह सच्चो कोइ?*
*असां कहयो शाह नानक जोइ ॥३४॥*

कैप्टन मरे ने पूछा, सच्चा पातशाह कौन

*१८०१-सी, मिशन कम्पाऊंड, निकट सेंट मेरीज़ अकाडमी, सहारनपुर (यू. पी.) २४७००१, मो. ९२१९७-८७७५६

है? हमने कहा, आदि गुरदेव श्री गुरु नानक देव जी सच्चे पातशाह हैं। ऐसी विलक्षण शक्ति खालसे को बख्शने वाले श्री गुरु नानक देव जी और उनके दसवें स्वरूप दशमेश पिता हैं :

*जिन शाह नानक चरन प्रसाए,*
*तिन मैं शकति इती भई आए।*
*चिड़ीअन ते उन बाज कुहाए,*
*छेलन कोलों शेर तुड़ाए ॥३७॥*

सिंघों का इतिहास श्री गुरु नानक देव जी से प्रारंभ हुआ, जिन्हें कि :

*हिंदू तुरक बाबे को समसर,*
*होहि मुरीद आइ सो इस कर।*
*दोऊअन कै गुर सच द्रिड़ावै,*
*जुलम करन ते दुअन हटावै।*

परंतु ज़ालिम जुल्म करने से कहां हटे? सतिगुरु नौवें पातशाह जी को शहीद किया गया:

*सतिगुर बड साका कीयो,*
*पर सवारथ हित निज सिर दीओ।*

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत ने ही दसवें पातशाह में यह प्रेरणा भरी कि पंथ-निर्माण के जिस उद्देश्य से वे इस धरा पर दशम गुरु के रूप में आए हैं उसे सम्पन्न करने का समय आ गया है :

*गुरु तेग बहादर देह दिल्ली लाई,*
*दिल्ली पत उन्ह जड़ उखड़ाई।*
*गुर गोबिंद सो लख लई,*
*अब तुरकन जड़ सुक सो गई ॥११॥ (पृष्ठ ७१)*

तब इन निरीह दुर्बल लोगों को गुरदेव जी ने बादशाह बनाने का निर्णय लिया :

*इन ग्रीब सिंघन को दयो पातिशाही,*
*ए याद रखैं हमरी गुरिआई। (पृष्ठ ७३)*

इसके लिए इनका बाहरी रूप-स्वरूप भी बदलना पड़ेगा और इनकी मानसिकता भी बदलनी पड़ेगी। ये टोपी पहनते हैं, दासों वाले नाम रखते हैं; 'चरण-पाहुल' शांत रूप है, इन्हें 'खंडे की पाहुल' देनी होगी, शस्त्रधारी बनाना होगा :

*यह चरण पहुल है शांत सरूप, तेज नाहि यहि मांहि अनूप ॥२९॥*
*सहेली टोपी सिर धरैं, दासहि नाम कहाइ ॥*
*हुती दया मध रूप बहु, इम नहिं शसत्र फड़ाइ ॥३०॥*
*(पृष्ठ ७३)*

इनका सुंदर शौर्यवान रूप बनाना होगा, इन्हें खंडे की पाहुल देंगे :

*अब सिक्खन रूप पलटाईऐ,*
*तेज धारी जिस लख भौ खाईऐ।*
*तेज नाम कोऊ इनै धरय्यै,*
*कर पाहुल इनैं तेज पिलय्यैं ॥३१॥*
*छत्री रूप सुंदर अति लागे,*
*केस सीस सिर बांधै पागे ॥३२॥*

इनमें इतना आत्मसम्मान भरा जायेगा कि ये किसी के दबैल नहीं होंगे सिवाय एक अकाल पुरख सच्चे पातशाह के :

*खालसो होवै खुद खुदा, जिम खूबी खूब खुदाइ।*
*आन न मानै आन की, इक सच्चे बिन पातिशाह ॥३५॥*

तब गुरदेव जी ने समूह सिक्ख संगत को 'हुकमनामा' भेजकर सबको श्री अनंदपुर साहिब में एकत्रित किया और बूटे शाह कृत 'तारीखे-पंजाब' के अनुसार अस्सी हज़ार के करीब संगत वहां खुले मैदान में एकत्रित हुई। सुंदर शामियानों और ऊंची स्टेज के साथ स्थान को सजाया गया था। खालसा साजने से पहले गुरु साहिब ने ऊंची स्टेज पर खड़े होकर प्रभाव-शाली स्वर में कहा कि अब समय आ गया है, जुल्म की अति हो गई है, जरूरी है कि सब शस्त्र धारण करें, एक साथ एक ही वेशभूषा में सज-धज कर फौजियों की भांति जुल्म का सामना करें, इसके लिए तन-मन

से मरना होगा और मरने के लिए हर पल तैयार रहना होगा। यह जरूरी है कि ऐसे में हमारा रहन-सहन, हमारी जीवन-शैली, हमारा व्यवहार एक-सा हो, हम एक ही धर्म के धारणी हों, द्वैत-भाव, दुविधा को अंदर से निकाल दें ; जात-पात, कर्म-कांड तथा अन्य झूठे पाखंडों का त्याग करें, सबकी एक ही जाति, एक ही कुल-गोत्र हो, सब एकता के सूत्र में बंधें। तब गुरु साहिब ने पांच शीश की एक-एक करके मांग की, ऐसे व्यक्ति जो धर्म व देश की रक्षार्थ मरने को तैयार हों। तब उस समूह में से पांच मरजीवड़े सामने आए। अमृत तैयार करते समय जपु जी, जापु साहिब आदि बाणियों का पाठ करते हुए बाटे में सतलुज से मंगाए गए पवित्र जल में गुरुदेव जी खंडा फेरते गए; पाहुल तैयार की। इसी बीच माता साहिब कौर जी ने लाकर उसमें बताशे डाल दिए जिससे कि तेजस्वी खालसे में आपसी व्यवहार के लिए मिठास बनी रहे। इस समय माता जी की मौजूदगी इस बात का प्रतीक है कि स्त्री जाति के समान सहयोग से पंथ अत्यंत विकास की ओर उन्मुख होगा।

इस दौरान पांचों मरजीवड़ों को अमृत छकाया गया। गुरु साहिब की परीक्षा-कसौटी पर खरे उतरे-- भाई दया सिंघ जी, भाई धरम सिंघ जी, भाई हिंमत सिंघ जी, भाई मोहकम सिंघ जी, भाई साहिब सिंघ जी। इन पांचों को गुरदेव जी ने गले से लगाया और कहा, ये मेरे 'पांच प्यारे' हैं। जिस ढंग से गुरु जी ने उन पांच प्यारों को अमृत छकाया था उसी ढंग से उन पांच प्यारों से गुरदेव जी ने अमृत छका :

*करी जु सतिगुर प्रिथम बिध, सोई पुन बिध कीन।*
*पंज भुजंगी जे भए, गुर उनते पाहुल लीन ॥*

*(पृष्ठ ७८)*

गुरदेव जी ने जैसे अन्य सबके नाम के साथ 'सिंघ' शब्द जोड़ने का आदेश किया था उसी अनुसार उनका नाम भी 'गुरु गोबिंद राय' से 'गुरु गोबिंद सिंघ' हुआ। स्त्री जाति को नाम के साथ 'कौर' शब्द लगाने का आदेश हुआ।

'गुर-सोभा' के रचयिता गुरदेव जी के समकालीन दरबारी कवि सैनापति बताते हैं कि गुरु जी ने उस समय रहित मर्यादा स्पष्ट की:

*हुका तिआग हरि गुन गावै,*
*इछा भोजन हर रस पावै। . .*
*भदर तिआग करो रे भाई।*
*सिर गुंमन के मुख नही लागो,*
*पांचमन को सब संगि तिआगो।*

*'पांचन को सब संगि'* से भाव-- नड़ीमार, कुड़ीमार, मीणे, मसंद, धीरमलीए का साथ नहीं करना। भाई नंद लाल जी बताते हैं : *"सिखी निशानी पंज काफ।"* पांच 'क'-- केश, कंघा, कृपाण, कड़ा, कछहिरा। ये पांच ककार सिक्खी की निशानी हैं।

बीस हज़ार के करीब सिंघों ने उसी समय अमृत-पान किया और धीरे-धीरे पंथक मर्यादा के साथ जुड़ने वालों का विशाल काफिला तैयार होता गया। गुरु दशमेश पिता जी से बल पाकर, ललकार सुनकर-- *"तौ सदि सतिगुर सिख ललकारे, फड़ो शसत्रन लिहु तुरकन मारे"*, गुरु के शूरवीर सिंघों ने तलवार, तीर, नेज़ों और अन्य शस्त्रों के वे करतब दिखाए कि अंत में जुल्म की जड़ें उखाड़ कर ही दम लिया। लगभग सौ साल तक अमृत-पान कर शुद्ध लौहपुरुष हुआ खालसा जूझता रहा, शहीद होता रहा और सुनहरे इतिहास की सृजना करता रहा। यह सुनहरा इतिहास सन् १६७५ में श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत से लेकर सन् १७७३ में हुई अब्दाली की मृत्यु तक, सौ सालों का इतिहास, सिक्ख शूरवीरों के लहू से लिखा इतिहास है,

जिसकी मुंह-बोलती तसवीरें 'श्री गुर पंथ प्रकाश' में स. रतन सिंघ (भंगू) ने पेश की हैं। सिक्खों पर क्या-क्या कहर नहीं ढाये गए-- अनंदपुर साहिब की जंग, चमकौर की जंग, बड़े साहिबजादों की शहादत, छोटे साहिबजादों की शहादत, जिसके सम्बंध में स. रतन सिंघ (भंगू) का विचार है :

*दै गोडे हेठ कर जिबर डारो।*
*तड़फ तड़फ गई जिंद उडाइ,*
*इम शीर खोर दुइ दए कतलाइ ॥३१॥*

घल्लूघारे, भाई तारू सिंघ की शहादत, मीन मनू द्वारा करवाया गया कत्लेआम और सिंघों पर ढाहे गए जुल्म :

*सुनै बात अब सिंघन की करी शाह जिम कूट।*
*कूटत-मारत सो थकयो खालसै भयो अखूट।*
*खालसा भयो अखूट नदी जिम सुंमेवाणी।*
*अगले आगै तुरे और छब आवै पाणी।*
*सतिगुर वधाया खालसा सभ आख उचारे।*
*जो दुसमन थे खालसै सो बोहर जिउ गारे।*

खालसा इसलिए अखूट रहा, मरता-पिटता भी चढ़दी कला में रहा, क्योंकि "*सिंघन पाहुल खंडे की दई, सिंघन गुड़ती खंडे की लई।*" अमृत की शक्ति इसमें अमरता का संचार करती रही। सिंघ अमृत की गुड़ती (घुट्टी) लेकर ऐसे दिलेराना करतब दिखाते रहे कि जुल्म करने वाले कांप जाते। अहमद शाह अब्दाली जैसा नृशंस भयानक जुल्म करने वाला भी सिंघों से मुंह न लगाने की प्रतिज्ञा करता है। स्वयं तो पश्चाताप करता ही है, भविष्य में ऐसे कुकर्म करने वालों को भी चेतावनी देता है :

*शाहि मुड़यो बड नमोशी पाइ,*
*इस आवन को बहु पछुताइ।*
*कहि चिड़िअन हम बाज दए गार,*
*करे छेलूअन हम शेर ख्वार।*
*इनकी मदद आपि खुदाइ,*
*पुजयो न बल हम इन पर काइ।*
*इन मैं शकत किछ आहि करीम,*
*कर देखयो हम बहुत फ़हीम ॥४४॥*
*अब जो मेरो इत देश आउग,*
*जो आउग सो पछोताउग।*

सच्चाई है कि अब्दाली ने फिर पंजाब की तरफ मुंह नहीं किया, सिंघों को पुन: छेड़ने का साहस वह जुटा नहीं पाया। सिंघों ने अनेकों कुर्बानियां देकर, शहादतें प्राप्त कर अपनी शूरवीरता का सिक्का कायम किया। इसी परंपरा में सिक्ख मिसलें कायम हुईं, जिसमें 'श्री गुर पंथ प्रकाश' भाई शाम सिंघ जी की बहादुरी और शहादत का जिक्र करता है और बताता है कि सरदार बघेल सिंघ कैसे दिल्ली तक पहुंचे और मुगलई किले पर गुरु-फतहि का निशान झुलाया। स. बघेल सिंघ ने दिल्ली और दिल्ली के आसपास के ऐतिहासिक गुरु-स्थानों को खोज कर चिन्हित किया और बाद में वहां पावन गुरुद्वारा साहिबान स्थापित हुए। 'श्री गुर पंथ प्रकाश' भाई शाम सिंघ जी की शहादत का वर्णन इतने भरोसे से इसलिए करता है क्योंकि स. रतन सिंघ स्वयं भाई शाम सिंघ करोड़ीए के नाती थे:

*सयाम सिंघ की सुनै कहानी,*
*जिम कर हमरी मात बखानी।*
*उनकी बेटी थी हमरी माता,*
*इम हम खोज जु तिस को जाता।* *(पृष्ठ ५३८)*

'श्री गुर पंथ प्रकाश' ने जिन सिंघों की गाथा लिखी वो उन लोगों के मुख से सुनकर जो स्वयं गुरु-चरणों पर समर्पित इतिहास रचने वाले थे। स. भतन सिंघ (भंगू) के पिता निरंजनीओं के जुल्मों का निशाना बने। उनके दादा स. महिताब सिंघ बहादुर योद्धा थे, जो जयपुर में राजा की नौकरी करता था, परंतु मस्से रंगड़ द्वारा श्री

*(शेष पृष्ठ २६ पर)*

# इंकलाबी वैसाखी

*-डॉ. अवतार सिंघ**

१६९९ ई की इंकलाबी वैसाखी के दिन श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने खालसे की स्थापना करके भारतीय लोगों में नव-शक्ति का संचार किया।

जन्म-सिद्ध अधिकारों की रक्षा के लिए, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने धर्म-युद्ध छेड़ने के लिए भक्ति एवं शक्ति का चिरस्थायी तथा अनूठा सुमेल करके 'संत' को 'सिपाही' भी बना दिया। यह शक्ति थी 'अमृत' की। 'अमृत' से इंकलाब आ गया, मुर्दा दिलों में ज़िंदगी की रूह भरी गई, 'चिड़ियां', 'बाजों' को नोचने लग गईं, लोगों में सिर उठाकर चलने का हौसला पैदा हुआ, ज़िंदगी से डरने वालों को सीना तानकर मरने का साहस मिला; सब असमानताएं मिटाकर सबको एक समान कर दिया गया; जिनको कोई छूता तक नहीं था उनको राज्य-गद्दी पर बिठाया गया; भारतीय रूह की काया-कल्प हो गई।

वास्तव में काया-कल्प करना गुरु साहिबान की बड़ी लम्बे समय की साधना एवं संघर्ष का परिणाम था। 'खालसा' गुरु साहिबान का आखिरी निशाना था जो दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने पूरा किया।

समय की परिस्थितियों के अनुसार भक्ति आंदोलन के महापुरुषों ने सामाजिक एवं धार्मिक कमियों के विरुद्ध कड़ा संघर्ष किया परंतु राजनीतिक अत्याचारों के विरुद्ध उन्होंने उतने ज़ोरदार ढंग से आवाज़ नहीं उठाई। भक्त कबीर जी द्वारा उच्चरित बाणी में उनके द्वारा सहन किए गए कष्टों का वर्णन उपलब्ध है :

*--भुजा बांधि भिला करि डारिओ ॥*
*हसती क्रोपि मूंड महि मारिओ ॥ (पन्ना ८७०)*
*--गंग गुसाइनि गहिर गंभीर ॥*
*जंजीर बांधि करि खरे कबीर ॥ (पन्ना ११६२)*

श्री गुरु नानक देव जी का मिशन क्रांतिकारी था। वे समकालीन सामाजिक, राजनीतिक, आध्यात्मिक, आर्थिक परिस्थितियों से सहमत नहीं थे तथा जीवन के हर क्षेत्र में परिवर्तन चाहते थे। उन्होंने निडर होकर अपने समय के खून चूसने वाले अत्याचारी राजाओं तथा धार्मिक नेताओं के विरुद्ध आवाज़ बुलंद की। दशमेश पिता तक पहुंचते समय सिक्ख धर्म के विकास तथा गुरु साहिबान के समकालीन शासकों के साथ सम्बंधों के बारे में संक्षिप्त दृष्टि डालनी आवश्यक है:

*१) श्री गुरु नानक देव जी को बाबर अपने हमले के दौरान बंदी बनने का दुस्साहस कर चुका था। गुरु जी संसार के बहुत सारे देशों में यात्रा करके लोगों को धर्म, सदाचार तथा सत्य का उपदेश दे चुके थे।*

*२) सम्राट हुमायूं भी श्री गुरु अंगद देव जी के दरबार में हाज़िर हो चुका था।*

*३) श्री गुरु अमरदास जी के दरबार में सम्राट अकबर आ चुका था।*

*४) श्री गुरु रामदास जी के कहने पर सम्राट अकबर अकाल के समय पंजाब के किसानों का एक वर्ष का लगान माफ़ कर चुका था।*

*५) श्री गुरु अरजन देव जी के समय श्री अमृतसर शहर अस्तित्व में आ चुका था। श्री*

**७०, माडल टाऊन (साऊथ), लुधियाना-१४४००१*

*हरिमंदर साहिब तथा सरोवर का निर्माण होने के उपरांत श्री गुरु ग्रंथ साहिब का स्वरूप तैयार करके उसका श्री हरिमंदर साहिब में प्रकाश कर दिया गया था। सिक्खों को सांझा ग्रंथ, सांझा धर्म-स्थान, अगुवाई देने वाला सच्चा गुरु, सांझी संगत तथा सांझी पंगत जैसी बहुमूल्य वस्तुएं प्राप्त हो चुकी थीं। सिक्ख संगठन में तेज गति से विकास हो रहा था।*

*६) श्री गुरु अरजन देव जी जहांगीर सम्राट की कट्टर नीति के कारण शहीद किए जा चुके थे।*

*७) 'भक्ति' को बचाने के लिए 'शक्ति' के प्रयोग का आरंभ मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब कर चुके थे। वे श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत के उपरांत ग्वालियर के किले में काफ़ी समय मुगल सम्राट की कैद भी काट चुके थे।*

*८) मज़लूम लोगों (हिंदू धर्म से सम्बंधित) के धर्म की रक्षा के लिए श्री गुरु तेग बहादर साहिब को उनके तीन अनन्य सिक्खों-- भाई मतीदास जी, भाई सतीदास जी तथा भाई दिआला जी सहित औरंगजेब के हुक्म से शहीद किया जा चुका था।*

*९) वास्तव में दोनों गुरु साहिबान-- श्री गुरु अरजन देव जी तथा श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत मुगल सरकार के धार्मिक तौर पर कट्टर होने का परिणाम थी। (**Niharranjan Ray, The Sikh Gurus & The Sikh Society, P. 24**)*

*१०) खालसे की स्थापना से पहले श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी बाईधार के पहाड़ी राजाओं से कई बार टक्कर ले चुके थे।*

*११) श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत ने नि:संदेह औरंगजेब की धार्मिक नीति के विरुद्ध लोहा लेने के लिए सिक्खों को मज़बूत किया तथा सिक्ख धर्म के विकास में आखिरी पड़ाव के लिए रास्ता तैयार किया। (**Indu Bhushan Bannerjee, Evolution of the Khalsa, Vol. II, P. 63**)*

१६९९ ई की वैसाखी पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने सिक्खों का महान समागम बुलाया, जिसमें आपने देश तथा कौम के नाम पर भावनात्मक अपील की। आपने देश के लिए प्यार तथा धर्म के प्रति वफ़ादारी पर ज़ोर दिया। आपने मुगल साम्राज्य के खातिमे तथा नई कौम के निर्माण के लिए ज़ोर दिया।

समय की नज़ाकत को पहचानते हुए गुरु जी ने म्यान में से कृपाण निकाली और एक शीश की मांग की। भाई दया राम (क्षत्रिय) लाहौर निवासी ने खुद को पेश कर दिया। बारी-बारी से भाई धरम दास (जट्ट), दिल्ली निवासी; भाई मोहकम चंद (छींबा), द्वारिका निवासी; भाई साहिब चंद (नाई), बिदर निवासी तथा भाई हिंमत राय (झीवर), द्वारिका निवासी ने अपने शीश गुरु जी को अर्पित किए।

गुरु जी ने खंडे-बाटे का अमृत तैयार करके, उन पांचों के छकाकर 'पांच प्यारे' की उपाधि दी। उनको 'खालसा' पद से निवाजा। गुरु जी के सिक्ख अमृत-पान करके 'खालसा' बन गए। डॉ. जी. एस. (दिओल) के अनुसार, जात-पात का शिकार हुए भारतीयों को, जो कभी भी इकट्ठे नहीं बैठे, एक जान किया गया। उनको एक ही बाटे में से अमृत छकाया गया। यह था गुरु जी द्वारा किया गया सामाजिक ढांचे में 'क्रांतिकारी' परिवर्तन। (**Social & Political Philosphy of Guru Nanak Dev & Guru Gobind Singh, P. 87**)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने हर पक्ष से गिर चुके लोगों की सोई हुई शक्ति को प्रभावशाली ढंग से जगाकर उनके मन में सामाजिक तथा कौमी

उन्नति के ऊंचे आदर्श भर दिये।

गुरु जी ने खालसे को पांच ककारों : केस, कंघा, कड़ा, कृपाण तथा कछिहरा की मर्यादा बख्शिश की। आत्मिक उच्चता के लिए नित्तनेम का पाठ करना आवश्यक करार दिया। इसके अलावा सिर पर दसतार सजाना भी मर्यादा में शामिल किया गया।

उच्च आचरण के धारणी खालसा के लिए चार कुरहितों (गलत काम) की बंदिश लगाई-- केशों का कत्ल, कुट्ठा खाना, पर-स्त्री या पर-पुरुष का भोग करना तथा तंबाकू का सेवन करना।

इस प्रकार गुरु जी ने खालसे को नवीन मर्यादा बख्शिश करके कुल संसार से विलक्षण बना दिया और इस न्यारे खालसे को अपना तप-तेज देने का वादा किया :

*जब लग खालसा रहे निआरा।*
*तब लग तेज दीओ मैं सारा।*
*जब इह गहै बिपरन की रीत।*
*मै ना करउं इन की परतीत। (सरब लोह ग्रंथ)*

दशमेश पिता जी ने जात-पात जैसी बुराई का पक्का हल ढूंढा। एक ही बाटे में सब लोगों को अमृत छकाकर सबको सामाजिक समानता प्रदान की, ऊंच-नीच के भाव का खातिमा कर दिया।

गुरु जी ने अपनी फ़ौज में तथाकथित नीची जाति के लोगों को भर्ती किया तथा उनमें से कायरता खत्म की।

*"मानस की जात सबै एकै पहिचानबो"* का आदर्श कथन-मात्र ही नहीं था बल्कि इसको व्यवहारिक रूप दिया गया। गुरु जी का विरोध किसी मुसलिम या हिंदू विशेष के साथ नहीं था, उनका विरोध तो केवल जालिम व अत्याचारी लोगों से था, चाहे वे हिंदू थे या मुसलमान। गुरु जी की लोक लहर को सूझवान मुसलमानों ने भी योग्य समझा। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को सबसे पहले ठसका मीरां (निकट कुरुक्षेत्र) के मुसलमान फ़कीर भीखण शाह ने उनके जन्म से थोड़ा समय बाद ही सांझा पीर घोषित कर दिया था। साढौरा के पीर बुद्धू शाह, माछीवाड़ा के भाई गनी खां-भाई नबी खां की गुरु जी के प्रति सेवाओं को खालसा पंथ कैसे भुला सकता है?

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का इस इंकलाबी वैसाखी वाले दिन का एक अन्य कमाल विचारने योग्य है। जिस प्रकार पांच प्यारों को अमृत-पान करवाया गया, उसी प्रकार गुरु जी ने पांच प्यारों के आगे घुटने टेककर उनसे अमृत की दात मांगी; अमृत-दाता अपने सिक्खों से अमृत की अभिलाषा कर रहा था। इस तरह 'गुरु गोबिंद राय' अमृत छककर 'गुरु गोबिंद सिंघ' बने; गुरु-शिष्य का भेद मिट गया। गुरु जी का फरमान है:

*इनहीं की क्रिपा के सजे हम हैं,*
*नही मो सो गरीब करोर परे। (दसम ग्रंथ)*

इस तरह पंचायतवादी युग का आरंभ किया गया। आगे से *"वाहु वाहु गोबिंद सिंघ आपे गुर चेला "* ने पंथ की अगुआई करने के लिए पांच प्यारों को सामूहिक रूप में जिम्मेदारी दी। ज्योति-जोत समाने से पहले दशमेश पिता ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब को गुरगद्दी प्रदान करके *"परचा शबद का, पूजा अकाल की, दीदार खालसे का"* विधान बख्शिश किया। सामाजिक समानता के प्रदाता दशमेश पिता ने पूर्व गुरु साहिबान की भांति स्त्री-जाति को पुरुष-वर्ग के बराबर अधिकार दिए। वे अमृत-पान करके युद्ध में लड़ाई भी कर सकती थीं, गुरुद्वारे में प्रवेश करके श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ तथा सेवा भी कर सकती थीं।

सिक्ख इतिहास में अनेकों उदाहरणें मिलती हैं जिससे पता चलता है कि सिंघणियों ने युद्ध-

भूमि में दुश्मनों के छक्के छुड़ा दिए। ऐसा समय भी आया जब अमृतधारी सिंघणियों ने अकथनीय तथा असहनीय कष्ट तो सहन कर लिए, किंतु दुश्मनों की बात न मानी और न ही अपना धर्म हारा।

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा सिक्ख कौम की कायाकल्प करके उसको संत-सिपाही वाला स्वरूप देने का बड़ा कारण था कि राजनीतिक परिस्थितियां ऐसी थीं कि भक्ति को शक्ति के बिना बचाए जाने का अन्य कोई रास्ता ही नहीं रहा था। बादशाह औरंगजेब को लिखे 'जफ़रनामा' में गुरु जी ने मज़बूरी में आकर शस्त्रों का प्रयोग करना जायज़ करार दिया :

*चु कार अज़ हमा हीलते दर गुज़शत ॥*
*हलालस्सत बुरदन ब शमशीर दसत ॥*

इस तरह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जुल्म से टक्कर लेने के लिए तथा राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए अपने सिक्खों को शस्त्रधारी बनाया। आपने अपने अनुयाइयों को हुक्म किया:

*शसत्रन के अधीन है राज।*
*जो न धरहि तिस बिगरहि काज।*
*यां ते सरब खालसा सुनीअहि।*
*आयुध सरबे उत्तम गुनीअहि।*
*जब हमरे दरसन को आवहु।*
*बन सुचेत तन शसत्र सजावहु ॥२३॥३॥*

शस्त्रों की महिमा करते हुए आप फरमान करते हैं :

*असि क्रिपान खंडो खड़ग तुपक तबर अर तीर ॥*
*सैफ सरोही सैहथी यही हमारे पीर ॥३॥*

राजनीतिक शक्ति मांगने से नहीं मिलती, इसको प्राप्त करने के लिए साधन है-- 'निज बल।'

*कोऊ किसे कउ राज न दे है।*
*जो ले है निज बल सिउं ले है।*

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने परिस्थितिवश सिक्ख धर्म को आखिरी तरतीब देकर 'खालसे' का निरूपण किया। खालसा शस्त्रधारी हो गया। 'देग तेग फतहि' के उद्देश्य को खालसे ने मुख्य रखा। गरीबों-जरूरतमंदों के लिए भोजन, अत्याचारियों के लिए तेग तथा जीत (विजय) के लिए विश्वास भरे एहसास ने खालसे के उद्देश्य की पूर्ति में बड़ा हिस्सा डाला। 'फतहि' खालसा ने वाहिगुरु को समर्पित की हुई थी, क्योंकि आपस में मिलते समय सिंघ एक-दूसरे को "वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि" बुलाते हैं।

१६९९ ई की इंकलाबी वैसाखी को श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा निरूपित खालसे ने मज़लूमों की रक्षा के लिए, स्वयं की रक्षा के लिए तथा अत्याचारी शासकों के विरुद्ध जो तेग चलाई, उसका इतिहास साक्षी है। सदियों से गुलाम लोगों में सोया हुआ स्वाभिमान जाग पड़ा और वे अपनी रक्षा करने के साथ देश-रक्षा के लिए भी तैयार-बर-तैयार हो गए। वहमों-भ्रमों भरा जीवन छोड़कर वे लोग परमात्मा की पूजा करने लग गए। उनमें धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सभ्याचारक चेतना पैदा हुई। गुरु जी के अमृत का सचमुच में ऐसा चमत्कार था जिससे अपने आप का एहसास खो चुके लोग मुगल साम्राज्य के जुल्मों के विरुद्ध अपनी पूरी ताकत से भड़क उठे और उन्होंने उस अत्याचारी राज्य की जड़ें खोखली कर दीं।

लाला दौलत राय के कथन के अनुसार, "सचमुख ही श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने ऐसे कौमी परवाने पैदा किए कि उनको अपने जीवन के सुख, अपने परिवारों का मोह-प्यार भी कुर्बानी के रास्ते से न रोक सका।" *--अनुवादक :*

*स. गुरप्रीत सिंघ भोमा*

# खालसा का निर्माण-स्थल : श्री अनंदपुर साहिब

*-डॉ. सुधा जितेन्द्र**

किन्हीं पुण्य कर्मों के प्रताप से मनुष्य को किसी ऐतिहासिक, धार्मिक अथवा सांस्कृतिक चेतना से युक्त स्थल की यात्रा करने का मंगल सुअवसर प्राप्त होता है। हमारे पुरखों, युग-प्रवर्त्तकों द्वारा किए गए पवित्र कार्यों के प्रत्यक्ष साक्षी ये स्थल हमारे चरित्र-निर्माता भी बनते हैं और जीवन को नई दिशा प्रदान करने का कारण भी। ये स्थल हमें केवल इसीलिए आकर्षित नहीं करते कि इन्होंने प्रसिद्धि प्राप्त कर ली है बल्कि इसलिए कि इनकी पावन भूमि निष्कपटता, निष्कलुषता तथा निष्काम सेवा-भावना से सिंचित होती है और जिस पर पवित्रता, वीरता तथा सुंदरता के सुगंधित पुष्प लहलहाते हैं। मानवता की धरती श्री अमृतसर से वीरता की धरती श्री अनंदपुर साहिब तक की यात्रा का एहसास, यही भावना मुझ में जगा गया और मैंने सपरिवार इस तीर्थ-यात्रा का संकल्प ले लिया।

श्री अमृतसर से रवाना होने से पूर्व हमने श्री हरिमंदर साहिब माथा टेकने की सोची। आनंदविभोर जब मैंने *"गगनु मै थालु रवि चंदु दीपक बने"* सुनी तो मुझे यूं आभास हुआ जैसे मैं किसी दैवी लोक में आ गई हूं, जहां ईर्ष्या, द्वेष और वैर का कोई स्थान नहीं। मन ही मन उस अदृश्य सिरजनहार को नमस्कार कर हमने श्री अनंदपुर साहिब के लिए प्रस्थान किया, उस स्थान के लिए, जहां श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी विदेशी हमलों की क्रूरता से दबी-कुचली भारत की जनता को झकझोर, उन्हें गुलामी की जज़ीरें तोड़ने के लिए तैयार किया तथा मानवता की सोई हुई शक्ति को जगाया। मेरे मन में वह पवित्र स्थान देखने की बहुत उत्सुकता थी, जहां हमारे इतिहास को एक नया मोड़ मिला था, जहां से भारत की जनता को अपने अंदर की शक्ति को पहचानने का आह्वान किया गया था।

रोपड़ से आगे का रास्ता बहुत ही रोमांचकारी था। बीच-बीच में हल्की-सी घुमावदार सड़क तथा दूर हिमाचल की तलहटी से घिरा संपूर्ण मार्ग मेरी इस क्षेत्र की प्रथम यात्रा होने के कारण अलग ही आनंद दे रहा था।

जैसे-जैसे हमारी कार नंगल नहर के साथ-साथ आगे बढ़ रही थी वैसे-वैसे ऊंचे-ऊंचे पेड़ों और पर्वतीय सुरम्य वातावरण का प्रभाव मुझे आह्लादित कर रहा था। मैं सोच रही थी कि मनुष्य क्यों इस प्राकृतिक निश्छलता से दूर होता जा रहा है? यहां कितना सुख है, आनंद है, शांति है! ऐतिहासिक नगर कीरतपुर साहिब से होते हुए जैसे ही हमने अनंदपुर साहिब में प्रवेश किया तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। जब मैंने चहुं ओर सफेद ही सफेद रंग से ढके घरों, दुकानों तथा अन्य इमारतों को देखा। मुझे स्मरण आया कि खालसा-स्थापना पर्व के उपलक्ष्य में शहर को विशेष ढंग से सजाया गया है। हमने ठहरने के लिए पंजाब मंडी बोर्ड द्वारा निर्मित एक 'हवेली' में कमरा बुक कराया हुआ था। मैंने सोचा था, पता नहीं कोई पुराना घर होगा। 'हवेली' तक पहुंचने वाली सड़क के एक ओर पहाड़ थे। जैसे

**अध्यक्षा, हिंदी विभाग, गुरु नानक देव यूनीवर्सिटी, श्री अमृतसर-१४३००१; मो. ९८१४८-५१०१०*

ही ड्राइवर ने बताया कि 'हवेली' आ गई है तो मैं अपने सामने एक भव्य अतिथि-गृह को देखकर दंग रह गई। यह स्थान पंजाब के गांवों की जीवन-झांकी को सुरक्षित रखे हुए था। प्रवेश द्वार के बाहर एक ओर दो बैल हल में जुते हुए दिखाई देते हैं और बिलकुल सामने रहट और कुआं बना हुआ था तथा उसके साथ का स्थान ऐसे लगता था मानो उसी कुएं से निकलने वाले पानी से सिंचा जा रहा हो। शहर की भीड़भाड़ से दूर इस भव्य महल ने तो जंगल में मंगल जैसी स्थिति बनाई हुई थी। पूरी हवेली सफेद राजसी ठाठ से सुसज्जित थी। जैसे ही हम प्रथम तल पर अपने कमरे में पहुंचे तो वहां से सारे शहर का अद्‌भुत दृश्य दिखाई दे रहा था। मैंने मन ही मन सोचा कि इस दुआओं की नगरी में चहुं ओर सात्विकता का ही प्रसार है और यह सात्विकता तो "चिड़ियों से बाज लड़ाने वाले की" नवाज़िश है।

स्नान करने के उपरांत मैं महान् पैगंबर श्री गुरु तेग बहादर जी द्वारा १६६४ ई में स्थापित और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा रक्षित नगर अनंदपुर साहिब के प्रमुख तीर्थ-स्थल तख़्त श्री केसगढ़ साहिब की ओर एक विशिष्ट भाव से चल पड़ी। यह क्या? ऐसी दीपमाला! ऐसा स्वर्णिम दृश्य! ऐसी आभा भरी झांकी! कहते हैं कि परमात्मा की पवित्र स्थलों पर विशेष अनुकम्पा रहती है, सो मैंने देख भी लिया। लोगों का ऐसा व्यवस्थित सैलाब! इतना विश्वास! इतनी भक्ति! इतनी निष्ठा! मेरा तो रोम-रोम पुलकित हो गया। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने जिस धरती पर भक्ति एवं शक्ति की अलख जगाई, लोगों का निज में विश्वास जगाया, उस पावन भू में यह आलोक नैसर्गिक है। मैं हाथ बांधे, श्रद्धावश, मस्तक निवाए, मंत्रमुग्ध-भाव से रोशनी की आभा में लिपटे हुए भवन-कला के सुंदर नमूने के रूप में तख्त श्री केसगढ़ साहिब को देखती चली गई। न तो मेरे कहीं पांव रुके और न ही कहीं मुझे कुछ पूछने की आवश्यकता महसूस हुई। हज़ारों की संख्या में दर्शनार्थ पहुंची संगत उस स्थल की शोभा को आत्मसात कर लेना चाहती थी जहां-जहां गुरु साहिबान ने विचर कर भक्ति और शक्ति का, तप और त्याग का, मीरी और पीरी का, संयम और निष्ठा का संदेश दिया था। तभी एक ओर मेरा ध्यान आकर्षित हुआ। गुरुद्वारे के भीतर ही विशिष्ट शस्त्रों की एक प्रदर्शनी में एक-एक करके उन शस्त्रों को दिखाया जा रहा था, जिन्हें गुरु जी ने प्रयुक्त किया था। इनमें दोधारी खंडा मेरे लिए विशेष आकर्षण का केंद्र था, क्योंकि जब गुरु साहिब ने 'अमृत' तैयार किया था तो लोहे के बाटे(बर्तन) में सतलुज के पानी को बाताशों सहित इसी खंडे द्वारा हिलाया गया था। यह गुरु जी का वही खंडा था जिसने मृतप्राय लोगों को संजीवनी दी थी। मैं अनायास नत्‌मस्तक हो गई। मुझे यूं महसूस हुआ जैसे मेरी शिराओं में रक्त उबाल खा रहा हो। मैं सोच रही थी, क्या यह श्रद्धा है? मेरा अटूट विश्वास है या फिर गुरु साहिब द्वारा फूंकी गई राष्ट्रीय भावना? इसके पश्चात् कटार, बरछा, नेजा तथा अन्य आयुद्धों का प्रदर्शन किया गया।

गुरु परंपरा में संगत के बाद पंगत का अविस्मरणीय दृश्य था। सब में समानता तथा भाईचारे के उद्देश्य से आरंभ किए गए 'लंगर' में मैंने स्वर्णिम आनंद अनुभव किया। ऐसा लगा जैसे जन्मों की भूख मिट गई हो। मैं एक कोने में खड़ी एक ही बार में हज़ारों लोगों को एक ही पंगत में खाना खाते देखकर गुरु साहिब द्वारा सबको एक समझने की भावना के प्रति नमन थी:

*हिंदू तुरक कोऊ राफजी इमाम साफी*
*मानस की जात सबै एकै पहिचानबो ॥(अकाल उसतत)*

रोशनी से जगमगाते शहर में जैसे सारा संसार टूट कर पहुंचा हुआ था, लोकिन पूरी तरह से व्यवस्थित। श्रद्धा, विश्वास और निष्ठा से पगी मैं वापिस 'हवेली' पहुंची। अगली सुबह प्रकृति के मनोरम दृश्य के बीच, पक्षियों की चहचहाहट के बीच आंख खुलते ही सामने दूर-दूर तक हरे-भरे लहलहाते खेत थे। स्नानादि से निवृत्त होकर मैं गुरुद्वारा सीसगंज साहिब गई, जहां श्री गुरु तेग बहादर जी के पावन शीश का दाह संस्कार किया गया था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा निर्मित अनंदगढ़ किला भी मैंने देखा, जिसे देखकर शत्रुओं से बचने की गुरु जी की कला स्वयं सिद्ध थी।

किला अनंदगढ़ में ही जमीन को खोदकर एक बावली बनायी गयी थी। इस स्थान विशेष तक पहुंचने के लिए लगभग ८४ सीढ़ियां थीं। यह स्थान इतना हवादार और ठंडा था जैसे पंखे लगे हों। भवन-कला के इस अद्‌भुत दृश्य से मैं तो क्या हर कोई रोमांचित था। अनुभव हो रहा था कि ये ८४ सीढ़ियां तो हमें ८४ योनियों से मुक्ति दिलाने वाली हैं, क्योंकि अगर हम एक-एक सीढ़ी को एक-एक निष्कपट, सात्विक भाव से जोड़ें तो निश्चित रूप से हम हर बुराई पर काबू पाकर इस संसार रूपी माया-बंधन से छूट सकते हैं। इतने भव्य निर्माण के पीछे इतना महान् संदेश!

यह विस्मयकारी, कभी न भूलने वाली यात्रा जहां मुझे एक ओर धर्म तथा संस्कृति से जोड़ती है, वहीं इस ओर भी प्रेरित करती है कि मैं महान् पुरुषों के महान् कृत्यों से कुछ सीख लूं; अहं, लोभ तथा काम के स्थान पर नि:स्वार्थता, परदुखकातरता तथा विश्वबंधुत्व की भावना अपना सकूं। नमन है उस पावन भूमि को! शत-शत नमन!! जो खालसा के निर्माण की चश्मदीद रही, मैं इस भू-भाग को देख रही हूं। मैंने यह सुअवसर पाया इसलिए मैं भी धन्य हूं!

*(पृष्ठ १९ का शेष)*

दरबार साहिब के अपमान की गाथा सुनकर, नौकरी छोड़ स. सुक्खा सिंघ के साथ श्री दरबार साहिब आये, रंगड़ का सिर धड़ से अलग किया। स. सुक्खा सिंघ अहमद शाह अब्दाली की फौज से लड़ता हुआ शहीद हुआ और स. महिताब सिंघ भाई तारू सिंघ जी के साथ चरखड़ी पर चढ़ शहीद हुए। स. रतन सिंघ के नाना भी शहीद हुए थे। वे बचपन में भागकर सिंघों के जत्थे में जा मिले थे; भाई मसतान सिंघ के डेरे में रहे और अंत में शहीद हुए। अत: ददिहाल-ननिहाल दोनों शहीद।

स. रतन सिंघ ने श्री गुरु रामदास जी के दरबार में टहल-सेवा करते हुए वहीं रहकर गुरु-कृपा से 'श्री गुर पंथ प्रकाश' की रचना की, जो अमृत की शक्ति की गाथा है। दशम पिता ने चिड़ियों से बाज तुड़ाए और उन्हीं अमृत-पान किए हुए सिंघों ने सुनहरा इतिहास रचा जिस इतिहास की गौरव-गाथा को सुन दुर्बल से दुर्बल व्यक्ति भी देश-कौम के प्रति कुर्बान होने को प्रेरित हो जाता है। सिक्ख इतिहास हमारा गौरव है, हमारी शानदार विरासत है, जिसे पढ़-सुन कर: "पाठक स्रोते नित रहैं, निहाल, निहाल, निहाल ॥"

*(पृष्ठ ५८३)*

# आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'गुरु नानक देव : व्यक्तित्व' में वैचारिकता के विविध आयाम

*-डॉ. गुरमीत सिंघ**

यहां आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध-संग्रह 'सिक्ख गुरुओं का पुण्य स्मरण' के सर्वप्रथम निबंध 'गुरु नानक देव : व्यक्तित्व' में निरूपित सभी विचारों को संक्षेप में प्रस्तुत करना ही अभीष्ट है। यहां विद्वान लेखक आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के द्वारा लिखित निबंध में प्रतिपादित सभी विचारों को क्रम से विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत विचार का विषय बनाया जाएगा। पूरे भारत ही नहीं, विश्व भर में सिक्खों के महान गुरुओं ने देश के स्वातंत्रय संग्राम में तो विशेष राष्ट्रीय चेतना से पूर्ण भूमिका निभाई ही है, इसके साथ ही उन्होंने गुरमुखी लिपि में, ब्रजभाषा जैसी भाषाओं में भी अपनी बाणी का अमृत जनसाधारण को पिलाया है। इस पाठ में सिक्ख धर्म के प्रवर्त्तक और सर्वप्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी के व्यक्तित्व के बारे में 'गुरु नानक देव : व्यक्तित्व' निबंध के आधार पर अत्यंत संक्षेप में परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है। इसके साथ ही निबंध में प्रतिपादित सभी विचारों को छात्रों/शोधार्थियों के अध्ययन की सुविधा के दृष्टिगत विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत एक क्रम से विवेचन का विषय बनाया जा रहा है।

निबंध का सार संक्षेप :

अब प्रमुख रूप से निरूपित विचारों या मुद्दों को शीर्षकों के अंतर्गत व्यक्त किया जा रहा है :

*१. मिस्टर ई ट्रंप का अनुवाद और प्राचीनतम जनम-साखी :* सिक्ख गुरु साहिबान में सर्वप्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी आज से लगभग ५४३ वर्ष पूर्व इस संसार में आए थे। भारत में अधिकतर गुरु साहिबान के जीवन से संबंधित दंत-कथाओं में करामातों और चमत्कारों का ही बाहुल्य है। लेखक आचार्य हज़ारी द्विवेदी ने शोधपूर्वक यह तथ्य दिया है कि भारत सरकार के अनुरोध पर मिस्टर ट्रंप ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का न केवल अनुवाद ही किया था, बल्कि श्री गुरु नानक देव जी की जनम-साखी वाली एक ऐसी प्राचीनतम पोथी के विषय में भी जानकारी दी थी जिस पोथी पर स्वयं श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने हस्ताक्षर किए हुए थे। मिस्टर ट्रंप के ही मत के अनुसार उस पोथी में चमत्कारों का अंश बाद में मिलने वाली जनम-साखियों की हस्तलिखित प्रतियों से कहीं कम था।

*२. मिस्टर एम. ए. मैकालिफ द्वारा अन्य जनम-साखी का उल्लेख :* इस उल्लेख के अनुसार जनम-साखी की रचना १५८८ ई. के आस-पास बताई जाती है। यह तिथि श्री गुरु नानक देव जी के अकाल चलाणे से केवल ५० वर्ष बाद की है। इस प्रति में भी चमत्कारपूर्ण अंश मिलते हैं। इसी प्रकार पुराने विवरणों में भी शुद्ध ऐतिहासिक तथ्यों पर शोध की दृष्टि से विभिन्न भारतीय विश्वविद्यालयों में कार्य किए जा रहे हैं।

*३. श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु नानक देव जी की बाणी :* इस महान् धर्म-ग्रंथ में आदि

**स्कूल लेक्चरार, गांव-डाक बलियाल, वाया भवानीगढ़, जिला संगरूर (पंजाब) मो. ९४१७६-७८४९८*

गुरुदेव की ये बाणियां सम्मिलित हैं : १. जपु जी साहिब २. आसा राग में 'पटी' ३. रामकली राग में निबद्ध 'ओअंकार' ४. रामकली राग में ही निबद्ध 'सिधगोसटि' ५. तुखारी राग में रचित 'बारह माहा' ६. माझ, आसा और मलार राग में रचित तीन 'वारें'।

*४. गहरी धर्मनिष्ठा के प्रमाण :* गुरु जी का जन्म तलवंडी नामक गांव में हुआ था। गांव के मुखिया राय बुलार थे। पाठशाला में गुरु जी अन्य छात्रों की तुलना में अधिक गंभीर, शालीन और धर्मनिष्ठ सिद्ध हुए थे। उनकी (बड़ी) बहन का नाम बेबे नानकी था। गुरु जी का विवाह माता सुलक्खणी जी नामक एक सर्वगुणसम्पन्न नारी के साथ हुआ था। उन्होंने अपने जीजा भाई जयराम जी की सहायता से कुछ दिनों तक पंजाब के सूबेदार दौलत खां लोदी के मोदीखाने में नौकरी भी की थी। एक दिन गुरु जी जब अपने काम वाले स्थान पर गए, तो वहां किसी ग्राहक के लिए अनाज तौलते समय वे एक, दो, तीन आदि संख्याओं की गिनती गिनते-गिनते 'तेरह' की संख्या को पंजाबी उच्चारण के अनुसार 'तेरा-तेरा' के रूप में ही उच्चारित करने लगे। इसके बाद उन्होंने सारा अन्न-भंडार उसी 'वाहिगुरु' का मानकर लोगों को दे डाला था। उनके नाम के साथ जुड़ी हुई इस किवदंति को एक सत्य-कथा मानने में किसी को भी कोई हिचक नहीं है।

*५. धर्मोपदेश, धर्म-प्रचार और भ्रमण :* आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी इस घटना से यह मानते हैं कि इसके बाद श्री गुरु नानक देव जी के लिए आध्यात्मिक भावना के विकास का मार्ग और भी अधिक प्रशस्त हो गया था। वे अधिक समय मिल जाने के कारण अब साधु, संतों और अन्य धर्मनिष्ठ शिष्यों आदि के साथ विभिन्न स्थानों का भ्रमण करने लग गए थे।

उन्होंने कामरूप (वर्तमान आसाम-गुवाहटी का प्रदेश) से लेकर मक्का मदीना तक की यात्रायें सम्पन्न की थीं। उनके श्रीमुख से इन यात्राओं के मध्य निकलने वाले बाणी रूप 'शबद' गाए जाने लगे थे। उन्हीं के गांव के एक मुसलमान भाई मरदाना जी पक्के तौर पर उनके शिष्य बन गये और सदैव उनके अंग-संग रहने लगे। उन्हीं ने गुरु जी के साथ रहकर उनके द्वारा उच्चरित बाणी को सांगीतिक रंग देकर अमर बना दिया। गुरु जी के संपर्क में आने के कारण वे भी संसार के मायाजाल से मुक्त हो गये थे।

*६. 'मनमुख' का संकल्प :* श्री गुरु नानक देव जी ने 'मनमुख' शब्द का सटीक प्रयोग किया है। इस श्रेणी के लोग सदैव अपने मन के संकेतों पर ही चला करते हैं और अपने भीतर उपस्थित तथा घट-घट की बात जानने वाले प्रभु की ओर कभी अपने मन को प्रवृत्त नहीं किया करते। इसी प्रकार बाहरी संसार की सारी जानकारी मायामुख ही हुआ करती है। श्री गुरु नानक देव जी की सभी बाणियों में इस संसार के कुमार्गगामी और भटके हुए लोगों के लिए 'मनमुख' विशेषण का ही सार्थक प्रयोग हुआ है। जब जीव को इस जीवन और जगत का वास्तविक ज्ञान हो जाता है, तब जाकर वह अपने मन के भीतर बैठे हुए प्रभु की ओर प्रवृत्त हुआ करता है।

*७. 'गुरमुख' का संकल्प :* लेखक का कथन है कि जब जीव बाहरी संसार से अपनी दृष्टि हटाकर केवल अपने भीतर स्थित परमात्मा की ओर प्रवृत्त होता है तो कहा जाता है कि वह 'गुरमुख' बन गया है।

*८. प्रभु की कृपा रूपी जल और उसका वितरण:*

लेखक के मतानुसार प्रभु का निरंतर चिंतन करना एक अनोखे 'रसायन' की तरह ही हुआ करता है। इस 'रसायन' के सेवन से एक सच्चे भक्त में प्रभु के दर्शन, सम्पर्क आदि की प्यास निरंतर बढ़ती ही चली जाया करती है। श्री गुरु नानक देव जी का वचन है : *"हरि चरण कवल मकरंद लोभित मनो अनदिनो मोहि आही पिआसा ॥"* जीव का लोभी मन उस प्रभु के चरणों रूपी कमल के पराग-रस को ही पीते रहना चाहता है। उसके कृपा रूपी जल को पीते-पीते यह मन रूपी हंस उसी प्रभु के मानसरोवर में रहने की इच्छा करने लगता है। लेखक के मतानुसार श्री गुरु नानक देव जी ने जी भरकर उस प्रभु के कृपा रूपी जल को पीया था और उसके अमृत रूपी रस को अपने तक ही सीमित न रखकर पूरे संसार के लोगों में भी सुमधुर भक्ति या नाम रूपी रस को बांटा था।

*९. बिंदु-सृष्टि और नाद-सृष्टि की तुलना :* विश्व में पहली बार किसी धार्मिक ग्रंथ को 'गुरु' का महान पद प्रदान करना केवल सिक्ख धर्म का ही काम है, और यह अदभुत श्रेय इसी धर्म के उन्नायकों, विशेष रूप से दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को ही दिया जाता है जिन्होंने गुरु की गद्दी-परंपरा को चलाए रखने की प्राचीन परंपरा समाप्त करके आदि ग्रंथ साहिब को ही 'गुरु' के रूप में प्रतिष्ठित करने का विलक्षण कार्य किया था। इसके साथ ही सिक्ख गुरुओं के द्वारा बिंदु के स्थान पर नाद-सृष्टि की परंपरा को अधिक महत्व प्रदान करने का अनूठा कार्य संपादित किया था। कहने का आशय यही है कि पुत्र-पौत्र आदि की वंशानुगत परंपरा ही 'बिंदु-परंपरा' हुआ करती है। दूसरी ओर नाद-सृष्टि के अनुसार किसी भी गुरु के पुत्र-पौत्र को उत्तराधिकार सौंपने की अपेक्षा उसके शिष्य और प्रशिष्य को उत्तराधिकार दिया जाना वास्तव में 'नाद-परंपरा' के नाम से पुकारा गया है। उदाहरणत: श्री गुरु नानक देव जी के अपने पुत्र थे और उनके विद्यमान होते हुए भी उन्होंने अपने परम सेवक और शिष्य श्री गुरु अंगद देव जी (पूर्व नाम भाई लहिणा जी) को ही गुर-गद्दी सौंपना उत्तम समझा था।

*१०. कटु की अपेक्षा मधुर स्वर :* श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी बाणी में अमृत के समान सुमधुर रस घोला था। उनके लिए एक भक्त के व्यक्तित्व में मधुर वचनों का ही रस होना अपेक्षित हुआ करता है :

*"बाबा बोलीऐ पति होइ ॥*
*ऊतम से दरि ऊतम कहीअहि नीच करम बहि रोइ ॥"*

आचार्य द्विवेदी का विचार है कि श्री गुरु नानक देव जी ने किसी का भी दिल दुखाए बिना संसार में एक महती क्रांति लाने का एक सर्वथा विलक्षण कारनामा कर दिखाया था। यह क्रांति आचार और विचार के ही क्षेत्र से संबंध रखती है।

*११. प्रेम-तत्त्व का विशेष महत्व :* गुरु जी जीव-मात्र को अपने जीवन में सदैव मैत्री और प्रेम-भाव का ही सदुपदेश देते दीखते हैं। इन भावों को धारण करके अपने सभी कार्य करने वाला व्यक्ति ही सदैव भेदों में अभेद और अनेकता में एकता की स्थापना के प्रति जागरूक और सचेष्ट रहा करता है। वे 'मुग्ध' अर्थात् मूढ़ मनुष्य को सदैव इसी प्रेम की साधना करने के लिए प्रेरित करते हैं।

*१२. प्रभु-नाम की महिमा :* श्री गुरु नानक देव जी ने प्रत्येक भक्त के लिए गुरु के आगे बिना किसी शर्त के पूर्ण आत्मसमर्पण करने की ही

शिक्षा दी है। इसके साथ ही वे एक रूपक के माध्यम से कहते हैं कि अनंत वैभवों से भरे-पूरे महल में रहकर भी वे उस प्रभु का नाम कभी न भूलने के लिए उसी से प्रार्थना करना चाहते हैं : *"मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥"*

*१३. 'हउमै' मनोविकार का त्याग :* श्री गुरु नानक देव जी जीव-मात्र को अपनी 'हउमै' अर्थात् मिथ्या अहंकार का त्याग करके प्रभु की भक्ति में ही सदैव मन लगाने की शिक्षा प्रदान करते नज़र आते हैं। वे मानते हैं कि 'अहंकार' का यह दूषित भाव ही संसार के जीव के लिए सबसे बड़े शत्रु का काम किया करता है। इसे छोड़कर ही जीव को उस प्रभु की प्राप्ति संभव हो सकती है, अन्यथा नहीं।

*१४. धर्म-प्रचार के लिए व्यापक यात्रायें :* श्री गुरु नानक देव जी ने अपने शिष्यों और भक्तों की मंडली के साथ जनसाधारण का कल्याण करने के प्रयोजन से दूर-दराज़ तक की विभिन्न यात्राएं कीं। उदाहरणत: उन्होंने केवल ३१ वर्ष की अवस्था में ही पूर्वी भारत के नगरों की अपनी पहली यात्रा पूरी कर ली थी। उनके जीवन की कुल आयु केवल सत्तर वर्ष थी। इस यात्रा में उनके प्रिय शिष्य भाई मरदाना जी सदा उनके अंग-संग चलते रहे थे। उनकी इस यात्रा का अंतिम छोर कामरूप तक था। पानीपत, नानकमता, वाराणसी और बौद्धों के नालंदा नामक विहार से होते हुए वे कामरूप तक जा पहुंचे थे, जिसे आजकल आसाम और गुवाहाटी का प्रदेश कहा जाता है।

उसके बाद लौटते हुए गुरु जी पाकपटन (वर्तमान पाकिस्तान में स्थित मिंटगुमरी) तक गए थे, जहां जाकर उन्होंने प्रसिद्ध सूफी फकीर शेख फरीद जी के प्रिय शिष्य शेख़ इब्राहीम से भी धार्मिक चर्चा की थी, जो कि एक ऐतिहासिक प्रमाणिक तथ्य माना जाता रहा है। मार्ग में उनके प्रिय शिष्य भाई मरदाना जी अपनी रबाब जैसे लोक-वाद्य पर उनके ही अनेक शबदों और पदों का गायन करते चलते थे।

श्री गुरु नानक देव जी की दूसरी यात्रा का समारंभ १५०६ ई के आसपास ही माना जाता है। वे सिरसा और राजस्थान के बीकानेर, अजमेर शरीफ तथा आबू (संस्कृत में अर्बुद) जैसे स्थानों से होते हुए पुरी नाम की नगरी में जा पहुंचे थे, जो कि आजकल उड़ीसा प्रदेश में है। इसके बाद उनके वहीं से नागपत्तन और श्री लंका तक भी जाने के प्रमाण मिलते हैं। इस यात्रा में उनके साथ दो नए जाट भी थे, जिनके नाम सैदो और धेबी बताए जाते हैं। इसके बाद श्री गुरु नानक देव जी की यात्राओं के बीच लगभग आठ वर्षों का अंतराल कहा जाता है। १५१४ ई में तीसरी यात्रा उन्होंने उत्तरी भारत के सीधे कैलाश पर्वत और वहीं पर स्थित मानसरोवर तक की सम्पन्न की थी, ऐसा ऐतिहासिक विवरण उपलब्ध होता है। इस बार नासू और सीहा नाम के दो नए शिष्यों को उन्होंने अपना साथी बना रखा था। इस यात्रा में वे तिब्बत और दक्षिणी चीन तक जा पहुंचे थे।

गुरु जी की चौथी यात्रा पश्चिमी भारत की ओर थी। वे एक हाजी या हज-यात्री के रूप में मक्का नामक मुस्लिम तीर्थ-स्थल तक चले गए थे। इस यात्रा से उनके सांप्रदायिक सद्भाव और समन्वय की भावना का ही पुष्ट प्रमाण मिलता है। वहां से वे येरूशलेम, दमिश्क और अल्लेपों होकर बगदाद तक जा पहुंचे थे। बगदाद जाकर उन्होंने बहील के बादशाह को सिक्ख धर्म की शिक्षा देकर कृतार्थ किया था।

इसी प्रकार अपनी प्रचार-यात्राओं से लौटने पर गुरु जी ने पंजाब में पाकपटन, दयालपुर, कगापुर, सुलतानपुर, जलालाबाद, तिरिया जैसे स्थानों का भी भ्रमण किया था। जब बादशाह बाबर ने उन्हें गिरफ़्तार कर लिया तब गुरु जी ने बाबर की करतूतों के लिए उसे बुरी तरह से लताड़ा भी था। अपनी इन यात्राओं में उन्होंने लाखों पीड़ित और शोषित जनों के दुखों एवं कष्टों का निवारण किया और उन्हें धर्म के सच्चे उपदेश भी दिए। यह और बात है कि इन यात्राओं में उनके नाम के साथ अनेक करामाती और चमत्कारिक घटनाओं का संभार जुड़ा मिल जाता है।

*१५. जातीय और धार्मिक भेदभाव :* श्री गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन में सदैव जातिवादिता और समाज में ऊंच-नीच के भावों एवं विचारों का भरसक विरोध किया था। यही कारण है कि वे सबके साथ बराबर स्नेह किया करते थे। इस प्रकार अपने इस कथन से उन्होंने सामाजिक समता या समानता का महान संदेश मानवता के लिए प्रसारित किया था। उन्हीं के शबद हैं :

*एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे॥*

*(पन्ना १३४९)*

*१६. विनम्र और वैराग्य का भाव :* श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में उनके अत्यंत विनम्र स्वभाव के प्रमाण स्थल-स्थल पर प्राप्त होते रहते हैं। इसी विचार से मिलता-जुलता भाव जीवन और जीवन-जगत की नश्वरता से भी उनके मन में उदित होता रहता था। वे उस 'वाहिगुरु' की नदरि (नज़र, कृपा-दृष्टि) का ही अपने को पूरी तरह से मुखापेक्षी या मुहताज माना करते थे। कभी-कभी वे इस संसार के माया-जाल से ऊब कर वैराग्य-भाव में डूबकर ऐसे शांत रस से पूर्ण पद भी गाया करते थे, जिन्हें सुन कर इस दुनिया के प्रति मन में अपार उदासीनता या तटस्थता का भाव किसी के भी मन में भर सकता है :

*रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ ॥*
*हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ ॥*

*(पन्ना १५६)*

गुरु जी की आत्मदीनता की भावना उनकी निम्न पंक्तियों में अपनी चरम सीमा पर दिखाई देती है :

*नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥*
*नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस॥*
*जिथै नीच समालीअनि तिथै नदरि तेरी बखसीस ॥*

*(पन्ना १५)*

*१७. प्रभु के अनुग्रह (भाणे) की महत्ता :* श्री गुरु नानक देव जी प्रभु को ही सर्वशक्तिमान मानते हैं। उसी के हुक्म से संसार का इतना सारा कार्यकलाप चल रहा है। हमें सदैव उसी के 'भाणे' (आदेश, इच्छा, कृपा) में रह कर अपने सभी कामों को करना और उनसे मिलने वाले फलों की विवेचना या व्याख्या करते रहना चाहिए। वे मानते थे कि ऐसा करने से ही मानव या जीव को अपने इस जीनव और जगत् में बढ़प्पन की प्राप्ति हुआ करती है। वे कहते हैं :

*हुकमी होवनि आकार हुकमु न कहिआ जाई ॥*
*हुकमी होवनि जीअ हुकमि मिलै वडिआई ॥*

*(पन्ना १)*

*१८. 'आरती' का विराट् रूपक :* काव्य-शिल्प के धरातल पर श्री गुरु नानक देव जी ने एक स्थल पर 'आरती' के एक विराट् रूपक की रचना की है। वे कहते है कि "सारा आकाश

एक विशाल थाल हैं, जिसमें सूर्य और चंद्रमा के दीपक सजे हुए हैं। आकाश के सभी नक्षत्र इस थाल के मोती हैं, मलयानिल धूप है और वायु चंवर कर रही है। यह कैसी अद्‌भुत आरती है तेरी? हे भव-खंडन प्रभु! तुम्हारा अनहद नाद इस विशाल आरती की भेरी की भांति बज रहा है।"

एक बार गुरु जी जगन्नाथपुरी गए थे। वहां एक विशाल जुलूस में प्रभु की आरती होती देखकर उन्हें काव्य धरातल पर उस प्रभु की ऐसी विशाल आरती की रचना करने की प्रेरणा मिली हो सकती है। अंत में विद्धान लेखक ने यह टिप्पणी भी की है कि गुरु जी अपने प्रभु से यह भी कहना चाहते हैं कि हे मेरे अगम अगोचर! जो तुझे अच्छा लगे, वही तेरी आरती है :

*सभ महि जोति जोति है सोइ ॥*
*तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥*
*गुरु साखी जोति परगटु होइ ॥*
*जो तिसु भावै सु आरती होइ ॥*

*(पन्ना १३)*

*१९. शरणागति और समर्पण का महत्व :* श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में यह बात भिन्न-भिन्न स्थलों पर बार-बार दोहराई गई है कि यह जीव जिस प्रभु पर अपनी अपार श्रद्धा की भावना का प्रकाशन किया करता है, एक दिन वह स्वयं भी उसी के समान होकर रह जाया करता है। अत: इस बात में कोई भी विस्मय नहीं करना चाहिए। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने आप को परमात्मा के आगे पूरी तरह से समर्पित कर दिया था। वे एक शरणागत भक्त के-से स्वर में उसी से यूं संबोधित होते हैं :

*जेता देहि तेता हउ खाउ ॥*
*बिआ दरु नाही कै दरि जाउ ॥*
*नानकु एक कहै अरदासि ॥*
*जीउ पिंडु सभु तेरै पासि ॥*

*(पन्ना २५)*

*२०. प्रभु के गुणगान की महत्ता :* श्री गुरु नानक देव जी ने अपनी बाणी में अनंत लोगों को उस प्रभु का व्यापक गुणगान करते हुए देखा था। असंख्य पंडित, साधु-संत, वीर और संयमी जन उसी का यशोगान करने में लगे रहते हैं। तीनों लोकों में एक प्रभु या ईश्वर सर्वसमर्थ कहा और माना जा सकता है।

*२१. सामाजिक क्रांति की चेतना :* लेखक ने श्री गुरु नानक देव जी की बाणी की सबसे महती देन के रूप में उसे सामाजिक क्रांति का महान संदेश देने वाली बाणी ठहराया है। उसके मतानुसार इस बाणी में ऐसी प्रभावशाली शक्ति है कि उसने लोगों में क्रांति का एक अभूतपूर्व द्वार ही खोल दिया है।

निष्कर्ष : *निबंध के अंत में आचार्य ने यह कह कर अपने इस निबंध को अत्यंत प्रासंगिक और समयसंगत बना दिया है कि आज भी मानव अपने तुच्छ अहं-भाव, भय, लोभ, तृष्णा आदि के मनोविकारों को ग्रहण करते रहने के कारण चारों ओर भटकते हुए नज़र आ रहे हैं।*

इस निबंध में विद्वान उपन्यासकार, निबंधकार, समीक्षक और साहित्येतिहासकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने पंजाब और विश्व भर में सिक्ख धर्म के आदि प्रवर्त्तक महान् गुरुदेव श्री गुरु नानक देव जी के जीवन की थोड़ी-सी झलक देते हुए उनकी बाणी के अनुसार पर उनकी मुख्य देनों को रेखांकित कर दिया है।

# गुरमति संगीत का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

*-डॉ. प्रेम मच्छाल**

धर्म तथा संगीत दोनों ही मानव से संबंधित हैं। सभी धर्मों ने संगीत को ईश्वरोपासना का माध्यम बनाया। धर्म ईश्वर से जुड़ा हुआ है और संगीत समाज के कण-कण में ईश्वर की तरह विद्यमान है। ब्रह्मांड में नाद व्याप्त है। जब नाद ईश्वर का स्वरूप है तो संगीत ईश्वर से भी सर्वश्रेष्ठ शक्तियों का संवाहक है। धर्म अगर सत्य की खोज है तो संगीत परम आनंद की अनुभूति है। हमारे शास्त्रवेत्ताओं ने ईश्वर तक पहुंचने का सशक्त माध्यम 'संगीत' स्वीकार किया है, क्योंकि मानव-मन अति चंचल होता है जिसे संगीत से अभिव्यक्त भक्ति की रस-धारा से एकाग्र किया जा सकता है। संगीत की उपासना प्रभु-भक्ति की उपासना से भी बढ़कर समझी जाती है।

धर्म और संगीत की उत्पत्ति न वाह्य उत्तेजनाओं से हुई है और न ही अवदमित काम-वृत्तियों से, बल्कि उच्चतर आध्यात्मिक अनुभूतियां ही इसकी जननी हैं।

यह एक प्रचलित धारणा है कि "गुरबाणी को संगीतबद्ध करके गाना ही 'कीर्तन' है।" संगीत कला का धार्मिक विकास भी भारतीय समाज की भक्ति-भावना के साथ संबंधित है। इसी भावना के कारण संगीत कला में भक्ति संगीत (आध्यात्मिक संगीत) शैली का निर्माण हुआ। प्राचीन काल के इतिहास और प्रमाणिक तथ्यों से यह ज्ञात होता है कि उस समय भी ईश्वरीय उपासना के लिए संगीत ही एक सशक्त माध्यम था।

सिक्ख धर्म में 'कीर्तन' का अहम स्थान है। संगीत-नियमों से निबद्ध गुरबाणी का गायन 'कीर्तन' कहलाता है। इसका अर्थ 'कीर्तिगान' से भी लिया जा सकता है। संगीत द्वारा प्रभु-भक्ति करने से मन में एकाग्रता उत्पन्न होती है, जिससे सत्य का अनुभव होने लगता है :

*कलजुग महि कीरतनु परधाना ॥*
*गुरमुखि जपीए लाइ धिआना ॥* *(पन्ना १०७५)*

आज भी हिंदू, मुसलिम, सिक्ख, ईसाई इत्यादि सभी धर्मों में प्रार्थना या धार्मिक अनुष्ठान आदि की रचनाएं संगीतात्मक तत्वों से सुसज्जित करके प्रस्तुत की जाती हैं। इसकी शैली के पक्ष में भिन्नता हो सकती है मगर संगीत के मूलभूत सिद्धांतों में नहीं, इसलिए श्री गुरु नानक देव जी ने संगीत की परंपरा और सुसंस्कृति के अनुकूल ही प्रचार करने का प्रयास किया जो सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता हुआ सफल हुआ।

श्री गुरु नानक देव जी ने रागाधारित कीर्तन की प्रथा का सूत्रपात करके गुरमति संगीत का आगाज़ किया। सिक्ख धर्म में 'कीर्तन-शैली' के धार्मिक विकास की प्रारंभता और सिक्ख धर्म की स्थापना श्री गुरु नानक देव जी ने ही की। उनके बाद यह परंपरा परवर्ती गुरु साहिबान और उनके अनुयायियों द्वारा पंजाब में गुरमति संगीत को सुदृढ़ता प्रदान करने में सक्षम रही। श्री गुरु नानक देव जी

**ASSTT. PROFESSOR, MUSIC & DANCE DEPTT., KURUKSHETRA UNIVERSITY, KURUKSHETRA -136119 MOB. 97295-60001*

ने अपने संगीत-ज्ञान के संबंध में भक्ति संगीत की प्राचीन परंपरा को मुख्य रखकर आध्यात्मिक संगीत का महत्व प्रकट किया है और इसको 'कीर्तन' कहकर सम्मान दिया है। शैली के पक्ष से उन्होंने प्राचीन और मध्यकालीन कीर्तन परंपरा को अपनाया और साथ ही इसमें शास्त्रीय, उप-शास्त्रीय और लोकगीत की गायन-शैलियों का समन्वय कर 'कीर्तन-शैली' के रूप में प्रचलित किया, जो कि संपूर्ण मानवता के लिए एक महान एवं अद्वितीय देन है।

प्रत्येक मत या धर्म की अपनी-अपनी सांगीतिक रचनाएं और शैलियां हैं। प्रत्येक शैली की अपनी विशेषता है, परंतु 'कीर्तन' के संगीत-सिद्धांत प्राचीन हैं। सिक्ख धर्म की कीर्तन-शैली की अपनी ही विशेषता है, एक अनुशासन है, जिसमें साधसंगत एकाग्रचित्त होकर प्रभु-चरणों से संलिप्त रहती है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी संगीतमयी है। यह बाणी ३१ प्रमुख व कई मिश्रित रागों में है। सिक्ख धर्म में कीर्तन का स्थान श्रेष्ठ बताया गया है। श्री गुरु अरजन देव जी फरमान करते हैं :

*सो असथानु बतावहु मीता ॥*
*जा कै हरि हरि कीरतनु नीता ॥* *(पन्ना ३८५)*

सिक्ख धर्म के पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने कीर्तन को निरमोलक हीरा अर्थात् जिसका कोई मूल्य न हो भाव अमूल्य नाम से संबोधित किया है, जो आनंद और मोक्ष का भंडार है :

*कीरतनु निरमोलक हीरा ॥*
*आनंद गुणी गहीरा ॥* *(पन्ना ८९३)*

गुरु साहिबान का कथन है कि जिस घर में कीर्तन की धुन गाई अथवा बजाई जाती है वहां हमेशा मन को प्रसन्न करने वाला 'बसंत' रहता है अर्थात् वहां उदासी या निराशा की 'पतझड़' नहीं आती :

*ग्रिहि ता के बसंतु गनी ॥*
*जा कै कीरतनु हरि धुनी ॥* *(पन्ना ११८०)*

कीर्तन का महत्व बताते हुए श्री गुरु ग्रंथ साहिब में अत्यंत सुंदर संदर्भ प्रस्तुत किया गया है। जहां हरि-कीर्तन होता है वहां यम अर्थात् मृत्यु का भी कोई भय नहीं रहता :

*जह साधू गोबिद भजनु कीरतनु नानक नीत ॥*
*णा हउ णा तूं नह छूटहि निकट न जाईऐ दूत ॥*
*(पन्ना २५६)*

गुरबाणी में कीर्तन को मोक्ष-प्राप्ति का साधन भी माना है तथा लोगों को कीर्तन की महत्ता दर्शाते हुए इसका गायन करने की प्रेरणा दी है।

कीर्तन करने वाले को 'कीर्तनिया' कहते हैं। 'कीर्तनिया' शब्द का संबोधन श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी कीर्तन करने वालों के लिए ही किया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में कीर्तन करने वालों की अत्यधिक प्रशंसा की है :

*भलो भलो रे कीरतनीआ ॥*
*राम रमा रामा गुन गाउ ॥*
*छोडि माइआ के धंध सुआउ ॥* *(पन्ना ८८५)*

गुरबाणी के शब्दों को गाने का सबसे उत्तम ढंग उसको उसके निश्चित राग में और राग की निश्चित धुनों के अनुसार ही गायन करना है। रागों में किए गए कीर्तन को 'गुरमति संगीत' भी कहते हैं।

सिक्ख धर्म में कीर्तन के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपूर्ण बाणी, दसम ग्रंथ की बाणी, वारां भाई गुरदास जी, गज़लें भाई नंद लाल जी तथा अन्य सिक्ख श्रद्धालुओं द्वारा लिखित 'सिक्ख रहित मर्यादा' के संदेशों (रहितनामे आदि) का गायन किया जाता है। इसके अतिरिक्त किसी

अन्य बाणी को कीर्तन में सम्मिलित करने का अधिकार किसी को नहीं है।

सिक्ख धर्म एक ऐसा धर्म है जिसमें श्रद्धा रखने वाला हर गुरसिक्ख सुख-दुख में अर्थात् हर समय कीर्तन का आनंद लेता है। मनुष्य के मानसिक रोग भी कीर्तन के प्रभाव से ठीक हो जाते हैं। श्री गुरु नानक देव जी के कीर्तन तथा उपदेश ने कई भूले-भटकों को सीधे रास्ते की ओर मोड़ दिया। जो व्यक्ति जिंदगी का सही उद्देश्य समझने में असमर्थ होते हैं वे गुरमति संगीत तथा भारतीय संगीत की महानता आंकने में भी समर्थ नहीं होते। औरंगजेब बादशाह के निर्दयी व अन्यायी होने का सबसे बड़ा कारण उसकी संगीत 'राग' से घृणा थी। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि संगीत मनुष्य को कोमलचित्त बना देता है।

कीर्तनकार को 'रागी' भी कहा जाता है। 'रागी' सिक्ख धर्म का परिभाषिक शब्द है, जिसका अर्थ है रागबद्ध शबद गायन करने वाला। सिक्ख धर्म में 'रागी' को एक महत्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त है। अस्तु आरंभ में राग-कला में दक्ष तथाकथित मीरासी जाति के लोगों द्वारा ही कीर्तन करने की प्रथा अस्तित्व में आई और जनसमाज आत्मविभोर होकर इसका श्रवण करता था। इस संदर्भ में भाई मरदाना जी का नाम सर्वोपरि है जो श्री गुरु नानक देव जी के रबाबी थे। सिक्ख कीर्तनकारों के नाम के आगे 'रागी' विशेषण लगाने की प्रथा परंपरागत रूप से चली आ रही है और इसकी नींव संभवत: श्री गुरु अरजन देव जी के समय में पड़ी, जिन्होंने सिक्खों को रागबद्ध कीर्तन करने के लिए प्रेरित किया। यह प्रथा पांचवें गुरु जी के समय तक चलती रही और उन्हीं के काल में एक ऐतिहासिक घटना ऐसी घटित हुई जिसके फलस्वरूप तथाकथित मीरासी जाति के लोगों से कीर्तन का एकाधिकार समाप्त हो गया। गुरु जी का आदेश हुआ कि अब अन्य सिक्ख भी कीर्तन कर सकते हैं। फलस्वरूप सिक्ख समाज में स्वर और ताल की शिक्षा प्राप्त कर कीर्तन करने का उत्साह व्याप्त हुआ और राग-संगीत की प्रतिष्ठा में और अधिक वृद्धि हुई। इस परिवर्तन के मूल में जो घटना बताई जाती वो इस प्रकार है।

श्री गुरु अरजन देव जी के समय में भाई सत्ता-भाई बलवंड नामक दो (तथाकथित मीरासी) कीर्तनकार थे जो पिता-पुत्र (कुछ मतानुसार भाई) थे। एक समय इनके परिवार में कन्या के विवाह के अवसर पर इन्होंने गुरु जी से आर्थिक सहायता की याचना की। इनकी इच्छानुसार धनराशि प्राप्त न होने के कारण वे गुरु-दरबार में कीर्तन करने से आनाकानी करने लगे व घमंडी होकर गुरु जी को अपशब्द बोलने लगे। तभी से श्री गुरु अरजन देव जी ने साधसंगत को स्वयं कीर्तन करने का आदेश दिया और स्वयं सारंदा-वाद्य के साथ कीर्तन करना प्रारंभ कर दिया, जिससे आपके अनुयायियों को प्रेरणा प्राप्त हो प्रोत्साहन मिला। तत्पश्चात दोनों भाइयों के द्वारा जनसमूह के समक्ष उपस्थित हो क्षमा-याचना करने के पश्चात तथा उनके मुख से गाई गई राग 'रामकली की वार' के माध्यम से गुरु-घर तथा गुरु साहिबान की स्तुति के फलस्वरूप उन्हें पुन: कीर्तन की सेवा बख्श दी गई। इस प्रकार तथाकथित मीरासी जाति के लोगों (रबाबियों) के द्वारा प्रचलित कीर्तन-प्रथा में अब अन्य वर्ग के कीर्तनकार भी सम्मिलित हो चुके थे। अब कीर्तन की परंपरा में पांच चौकियों के स्थान पर पंद्रह चौकियों का

प्रचलन हो चुका था, जिसमें आठ चौकियां सिक्ख कीर्तनकारों की और सात चौकियां रबाबियों की निश्चित कर दी गईं। अब कीर्तन करने की अवधि भी बढ़ा दी गई। इस ऐतिहासिक घटना के फलस्वरूप कीर्तन में जो बदलाव आया उसके प्रचलन में सुदृढ़ता, निरंतरता तथा प्रवाहात्मकता सुनिश्चित हो सकी। इस प्रकार गुरमति संगीत में तथाकथित मीरासी जाति के लोगों द्वारा दिए गए योगदान का मान-सम्मान रखते हुए श्री गुरु अरजन देव जी ने पुन: कीर्तनकारों को *"भलो भलो रे कीरतनीआ"* के रूप में प्रतिष्ठित किया।

संदर्भ-सूचना :

१. सिक्ख गुरुओं का हिंदोस्तानी संगीत में योगदान (लघु शोध-प्रबंध), कुलदीप कौर
२. संगीत समीक्षा, डॉ. डी. एस. (नरूला)
३. पंजाब की संगीत परंपरा, गीता पैंतल
४. संगीत कला का इतिहास, पन्ना लाल मदान
५. सिंघ सभा पत्रिका, कीरतन अंक, फरवरी, १९७८
६. धर्म का मार्ग, प्रो. बचन सिंघ बचन
७. सत्ते-बलवंड दी वार, प्रो. साहिब सिंघ

कविता

## मन मेरे! तुम उदास मत हो

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

*मन मेरे! तुम उदास मत हो।*
*सपना टूटा तो क्या हुआ,*
*हम तो नहीं टूटे।*
*मन मेरे! तुम उदास मत हो।*
*अच्छा समय चला गया तो क्या हुआ,*
*उम्मीद तो नहीं गई।*
*मन मेरे! तुम उदास मत हो।*
*दुनिया की नज़रें बदल गईं तो क्या हुआ,*
*हम तो नहीं बदले।*
*मन मेरे! तुम उदास मत हो।*
*हिम्मत वो नहीं, जो खो गई,*
*हिम्मत वो है, जो तुम खो रहे हो अब,*
*उदास होकर।*
*मन मेरे! तुम उदास मत हो।*
*प्रभु को अपने पास अनुभव करो,*
*क्योंकि गुरबाणी का फरमान है :*
*"जा कै अचिंतु वसै मनि आइ ॥*
*ता कउ चिंता कतहूं नाहि ॥"*

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.)। मो. : ०९४११६०७६७२*

# नानक साचि रते बिसमादी . . .

*-डॉ. नरेश**

साधु-संतों, भक्तों, गुरुओं-पीरों की बाणी जीवन और जगत्, सृष्टि और सृष्टा, आत्मा और परमात्मा, धरती और आकाश, प्रकृति और जीव के पारस्परिक सम्बंधों के बहुआयामी गवाक्ष में से आ रहे, श्रावण मास की प्रथम वर्षों से भीगे वायु के उस झोंके के समान होती है, जो हमारे अंतर्मन में उतरने में सक्षम है तथा जिसमें पृथ्वी की ममतामयी महक भरी हुई है। मातृ-क्रोड तथा गोलोक उस रस्सी के दो सिरे हैं, जिसके ऊपर नाशवान सांसारिक प्राणी थोड़ी-थोड़ी देर नाचकर आलोप हो जाते हैं। यह रस्सी (माया), यह नृत्य (कर्म), यह नृतक (जीव) अर्थात् यह दृश्यमान जगत् अंतिम सत्य नहीं है बल्कि इस रस्सी पर थिरकते पैर कई बार इस प्रकार एक सिरे से दूसरे सिरे तक जा पहुंचते हैं कि फिर कभी लौटकर इधर नहीं आते। ज्योति, ज्योति में विलीन हो जाती है और नृत्य की सारी लीला ही समाप्त हो जाती है। भक्त कबीर जी के शब्दों में "*फूटा कुंभ जल जलहि समाना*" हो जाता है।

माया में भ्रमित व्यक्ति की आत्मा की यात्रा का प्रथम चरण जिज्ञासा है। युगों-युगों से कवियों की मनीषा इस प्रथम चरण में से प्रशनात्मक बिंदु पकड़ती रही है कि यह धरती क्या है, आकाश क्या है, सूर्य-चंद्रमा क्या है, प्रकृति क्या है, शरीर क्या है, आत्मा क्या है, प्रकृति का समस्त तानाबाना अपने किसी आंतरिक विधान द्वारा परिचालित है या उसके पीछे कोई अदृश्य शक्ति कार्यरत है, जो अदभुत निपुणता के साथ इसे चला रही है। ये अनुत्तरित कालजयी प्रश्न ऐसे प्रश्न हैं, जो प्रत्येक अध्यात्म-रसिया जिज्ञासु को आंदोलित करते रहते हैं।

जागृत मन में यही जिज्ञासा साधना का प्रथम चरण बनती है। अपनी इस ज्ञान-पिपासा को शांत करने के प्रयास में लगा साधक उस सत्य को जा पहुंचता है कि इस चराचर में गतिमान शक्ति वही परम अदृश्य शक्ति है, जिसका अंश आत्मा के रूप में हम सबके भीतर मौजूद है। अंश, अंश ही होता है, सम्पूर्ण इकाई नहीं होता, इसलिए अंश की सीमाओं को भी स्वीकार करना होता है। अंश की सबसे बड़ी सीमा नेत्रों की है। इस पंचभूता शरीर की मांसल आंखों से उस अदृश्य अगोचर को नहीं देखा जा सकता। इसके लिए चिरकाल से बंद पड़े भीतर के नेत्रों का उन्मीलन आवश्यक है। जब तक भीतर की बंद आंख नहीं खुलती तब तक वह अदृश्य शक्ति नूर ही नूर है, जो कभी हाथ नहीं आता और जिसका दर्शन भी सपना ही प्रतीत होता है।

गुरु साहिबान की भांति सूफ़ी साधकों ने भी इस बात पर ज़ोर दिया कि अदृश्य-निराकार प्रभु के साथ संवाद रचाने के लिए

**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९*

भौतिक साधन सहायक नहीं बन सकते, क्योंकि ये सब मानव द्वारा बनाए गए साधन हैं। उदाहरणार्थ, शब्द मनुष्य के बनाए हुए हैं, जबकि ध्वनि उसकी रचना नहीं है। हम बोलने वाले किसी भी व्यक्ति को कोई भी भाषा सिखा सकते हैं लेकिन हम गूंगे को बोलना नहीं सिखा सकते, क्योंकि उसके पास ईश-प्रदत्त वाणी नहीं है। अत: मानव द्वारा निर्मित शब्दों के माध्यम से ब्रह्म के साथ संवाद रचाना असंभव है। यही कारण है कि विद्या या शिक्षा के माध्यम से अर्जित ज्ञान यहां अर्थहीन हो जाता है। साधना के बीच में ज्ञान के घुस आने से एक बड़ी समस्या यह पैदा हो जाती है कि ज्ञान मन की समस्त अनुभूतियों को नरक की कसौटी पर खरा उतरते देखना चाहता है, जिसके अभाव में वह अनुभूतियों को भ्रम, धोखा, छलना, आत्म-व्यंजना, आत्म-प्रपंच आदि कहकर नकार देता है। अत: जब साधक ज्ञान से पिंड छुड़ाकर, इल्म से नाता तोड़कर, सात्विक ऊर्जा को वाहन बनाकर सत्य के मार्ग पर अग्रसर होता है, तब दिव्य प्रकाश (नूरे-अलाही) उसका मार्गदर्शन करता है।

अध्यात्म-साधना में यह अवस्था बहुत परिश्रम के बाद प्राप्त होती है कि शरीर अपना संसार-धर्म निभाता रहे और आत्मा प्रतिपल प्रिय की छवि निहारती रहे। जल के भीतर खिले कमल पुष्प के समान संसार में रहते हुए भी संसार से निर्लिप्त रहने की अवस्था को प्राप्त होना सरल नहीं है, लेकिन यहां पहुंचे बिना उस तार को फिर से जोड़ना संभव है, जो कर्मों के भार से दबकर टूट गई थी।

सृष्टि के कण-कण में उसकी विद्यमानता को अनुभव करने वाला साधक अंतत: सहज रूप से ही प्रत्येक वस्तु में उसका जलवा देखने लगता है तो उसे यह सहजता आनंदित करने लगती है। यह अवस्था बहुत श्रमसाध्य नहीं है, लेकिन कठिनाई भी यही है कि सरल कार्य करना लोगों को कठिन दिखाई देता है। ग़ालिब इसे "दुश्वार तो यही है कि दुश्वार भी नहीं" कहकर वर्णित करते हैं। जब कोई व्यक्ति इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है तब उसे परमात्मा को देख पाने का ढंग व नज़र मिल जाती है। ग़ालिब अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं :

*क़तरा में दजला दिखाई न दे और जुल्म में कुल,*
*खेल लड़कों का हुआ दीदा-ए-बीना न हुआ।*

भावार्थ : उनकी दृष्टि, दृष्टि नहीं है, बच्चों का खेल है, जिनको बूंद में नदी और अंश (आत्मा) में सम्पूर्ण (परमात्मा) दिखाई नहीं देता।

सार यही है कि उस ज्योति स्वरूप को देखने के लिए स्वयं को साधना द्वारा ज्योति बनाना होता है। प्रकाश बने बिना, नूर बने बिना, ज्योति का ज्योति में समाना नहीं हो सकता। गुरबाणी के अनुसार जो उस परमात्मा के रंग में रंग जाते हैं अर्थात् उसका अस्तित्व अनुभव करने लगते हैं वे प्रभु-लीला देखकर हैरान होते हैं तथा उसी के गुण गाते रहते हैं:
*नानक साचि रते बिसमादी बिसम भए गुण गाइदा ॥*

*(पन्ना १०३६)*

# भाई नंद लाल जी 'गोया'

*-श्री चन्द्र शेखर 'अक्स भारती'**

भाई साहिब भाई नंद लाल जी 'गोया' बादशाह औरंगज़ेब के राज्य-काल के सुप्रसिद्ध फ़ारसी कवि हो गुज़रे हैं। उनके पिता 'दीवान छज्जू राम' अफ़गानिस्तान के नवाब 'मुईनुद्दीन' के दरबारी और मीर मुंशी थे। दीवान छज्जू राम अरोड़ा-खत्री परिवार से सम्बंधित थे और अफ़गानिस्तान के नगर 'ग़जनी' के 'बाक़र' महल्ला में रहते थे। वे अरबी और फ़ारसी भाषाओं में विशेषत: प्रवीण थे।

भाई नंद लाल जी 'गोया' की आयु अभी सत्रह वर्ष की ही थी कि उनकी माता का देहांत हो गया। इसके दो वर्ष उपरांत उनके पिता दीवान छज्जू राम भी परलोक सिधार गए। सुलतान नवाब मुईनुद्दीन ने भाई नंद लाल जी 'गोया' को उनके पिता की सेवाओं के दृष्टिगत अपने दरबार में एक अच्छे पद की पेशकश कर दी, परंतु भाई नंद लाल जी 'गोया' ने वापिस हिंदोस्तान लौट जाने की इच्छा प्रकट की। उन्हीं दिनों एक व्यापारी क़ाफ़िला मुलतान (भारत) के लिए प्रस्थान कर रहा था। क़ाफ़िला सालार (क़ाफ़िले के मुसाफिरों का अध्यक्ष) एक पठान था, जो भाई नंद लाल जी 'गोया' के पिता का घनिष्ठ मित्र था। भाई साहिब उसके साहचर्य में हिंदोस्तान चले आए। वे मुलतान (वर्तमान पाकिस्तान) पहुंच कर वहां देहली गेट के निकट एक मकान बनवा कर उसमें रहने लगे। मुलतान उन दिनों एक बड़ा व्यापारिक केंद्र था।

चालीस वर्ष की आयु में भाई नंद लाल जी 'गोया' ने अपने मस्तिष्क में एक विशेष क्रांति का अनुभव किया। वे संसार से विरक्त होकर सच्चे गुरु की तलाश में उद्विग्न रहने लग गए। पंजाब के कुछ स्थानों पर घूमने-फिरने के बाद वे आगरा पहुंचे। उन दिनों बादशाह औरंगजेब का बड़ा बेटा बहादुर शाह आगरा का गवर्नर था। भाई नंद लाल जी 'गोया' ने बहादुर शाह के व्यक्तिगत सद्गुणों के प्रसंग सुने और अपनी मौज में उसकी प्रशंसा में एक क़सीदा कह दिया। जब वह फ़ारसी क़सीदा (प्रशस्ति-गान) बहादुर शाह को सुनाया गया तो उसने भाई नंद लाल जी की साफ़-सुथरी फ़ारसी भाषा की योग्यता से खुश होकर उसे अपने दरबार का 'मीर मुंशी' (लिपिकों का अध्यक्ष) नियुक्त कर दिया।

अरसा दो साल बाद बादशाह औरंगजेब का आगरा आने का इत्तिफ़ाक हुआ। एक शाही मजलिस (राजकीय गोष्ठी) का आयोजन किया गया। इस गोष्ठी में उस ज़माने के उलमा-ए-दीन (धार्मिक विद्वान) को आमंत्रित किया गया। कुराने-पाक (पवित्र कुरान) की एक आयत ज़ेरे-गौर (विचाराधीन) थी। भाई नंद लाल जी 'गोया' ने कुराने-करीम की उस आयत की तफ़्सीर (व्याख्या) सही तौर पर कर दी। बादशाह औरंगजेब ने खुश होकर भाई नंद लाल जी 'गोया' को एक शाही ख़िलअत (बादशाहों के पहनने योग्य पोशाक) पहना दी, जिसकी कीमत उस ज़माने में पांच सौ रुपये थी।

भाई नंद लाल जी 'गोया' पीर ग़ियासुद्दीन

**वार्ड नं. ३, वसंत विहार, चम्बाघाट (सोलन), हिमाचल प्रदेश-१७३२१३, मो. ९८१६०-४२४२१*

के साहचर्य में रहने लगे। पीर ग़ियासुद्दीन के दिल में दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के लिये अटूट श्रद्धा थी। उन्होंने भाई नंद लाल जी 'गोया' को साथ ले जाकर अनंदपुर साहिब में उन्हें कलगीधर पातशाह के दर्शन करवाये। पीर ग़ियासुद्दीन और भाई नंद लाल जी 'गोया' को गुरु साहिब ने आशीर्वाद दिया।

दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी महाराज का दरबार पाऊंटा साहिब में लगता था। पाऊंटा साहिब ज़िला सिरमौर हिमाचल प्रदेश में यमुना नदी के किनारे स्थित है। गुरु साहिब के दरबार में उस ज़माने के बावन उत्कृष्टतम कोटि के विद्वान मौजूद थे। दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के महान व्यक्तित्व, उनकी सर्वतोमुखी अद्वितीय योग्यता, उनकी आध्यात्मिक उत्कृष्टता, बल्कि उनमें उद्दीपित रब्बी ज्योति के दिग्दर्शन करके और उनकी भक्ति में सरशार होकर भाई साहिब भाई नंद लाल जी 'गोया' ने साठ फ़ारसी ग़ज़लों और उन्नीस फ़ारसी रुबाइयों का संग्रह 'बंदगीनामा' शीर्षकाधीन गुरु साहिब को अर्पित किया। कलगीधर पातशाह ने बड़ी अमीक़ नज़री (गहन दृष्टि) से 'बंदगीनामा' (फ़ारसी) की हर ग़ज़ल, हर रुबाई के प्रत्येक शब्द और तद्गत भावना का जायज़ा लिया और अंतत: उनकी पवित्र रसना से स्वत: (फ़िल्बदीह-**Spontaneously**) यह शेअर व्यनुनादित हुआ:

*ज़ि आबि हैवा पुर शुद चू जामि ऊ।*
*ज़िंदगी-नामा शुदा ज़ां नामि ऊ।*

अत: कलगीधर पातशाह को लक्ष करके लिखे गए 'गोया' जी के इस सूफ़ियाना कलाम के संग्रह का नाम 'बंदगीनामा' की जगह 'ज़िंदगीनामा' पड़ गया।

'बंदगीनामा' मौसूमा ब (नामित) 'ज़िंदगीनामा' के अलावा भाई साहिब भाई नंद लाल जी 'गोया' की अन्य तसनीफ़ (लिखी गई किताबें-- १. तौसीफो सनाए, २. ख़ातिमा और ३. गंजनामा, जाने कहां हैं? किसके पास हैं? इनका पूरा मसविदा (मैटर) कहीं है भी या नहीं, कुछ मालूम नहीं। बस, दशम पातशाह का एक ही स्तुति-गान--"*नासिरो मनसूर गुर गोबिंद सिंघ।- ईज़दि मनजूर गुरू गोबिंद सिंघ*" ही गुरु के प्यारों को ज्ञात है जो गंजनामा से उद्धृत है। उपरोक्त पुस्तकों का मैटर जहां भी हो उसे संगृहीत किया जाना चाहिए और उसे बरवक्त ज़ेवर तबाअत से आरास्ता (प्रकाशित) कर लेना चाहिए। भाई साहिब की उन रचनाओं में क्या-क्या होगा, इस बात का अनुमान हम उनकी आध्यात्मिक कमाई, जो उनकी कलगीधर पातशाह के प्रति अटूट श्रद्धा एवं भक्ति के कारण उन्हें वरदानस्वरूप मिली है, से लगा सकते हैं।

भाई साहिब भाई नंद लाल जी 'गोया' का बड़ा बेटा नि:संतान रहा। उनका छोटा बेटा दीवान लखपतराम मुलतान (पाकिस्तान) में आबाद था। उसके वंशज पाकिस्तान बनने के बाद पंजाब में ही आबाद हुए थे। शायद उनके निजी परिवार वालों ने संभवत: उपरोक्त तीनों किताबों का मसविदा संभाल कर रखा हुआ हो। मुलतान से उजड़ कर आये हुए ऐसे कई वयोवृद्ध व्यक्ति अभी तक तो जीवित होंगे, जिनसे उपरोक्त तीनों पुस्तकों का समस्त मैटर या भिन्न-भिन्न लोगों के पास थोड़ा-थोड़ा मैटर मौजूद हो, जिसे प्राप्त करके इन तीनों किताबों को भी मंजरे-आम पर लाया जा सकता है ; भरसक प्रयत्नों की ज़रूरत है :

*बे खतर कूद गया आतिशे नमरूद में इश्क*
*अक़्ल है मैहबे तमाशा-ए-लबे बाम अभी।*

सबसे पहले सरदार डॉ. गंडा सिंघ (भूतपूर्व, डायरेक्टर ऑफ़ आरकाईव्ज़, पटियाला, पंजाब) ने बड़ी मेहनत और तहक़ीक़ (खोज) करके

१९६३ ई में 'कुलियाते गोया' शीर्षकाधीन गोया जी की गज़लियात छपवाई थीं। अप्रैल, १९७० ई में सरदार डॉ किरपाल सिंघ ने भाई साहिब भाई नंद लाल जी 'गोया' की फ़ारसी ग़ज़लों का सलीस (सरल) उर्दू में अनुवाद करने का काम जनाब डॉ सैय्यद साहब को माननीय प्रोफेसर हरबंस सिंघ ने अपनी अनथक कोशिशों से उस समय तक के उपलब्ध 'दीवाने-गोया' में कहीं-कहीं मामूली रद्दोबदल वाले कुलियाते-गोया से भिन्न-भिन्न प्रकाशित और दो अप्रकाशित नुसख़े फ़राहम (दूर-दराज़ से इकट्ठा करने) करके दिये। डॉ सैय्यद आबिद साहब ने 'कुलियाते-गोया' के नुसखे (संग्रह) और प्रो साहिब द्वारा प्रदत्त पांचों नुसखों के फ़ारसी मतन (**Text**) का तुलनात्मक अध्ययन किया। जो पंक्तियां सब नुसखों में समान भीं, वे हू-ब-हू वैसी लिख लीं। किसी भी नुसखे में कोई भी पंक्ति या शब्द भिन्न होने पर सब नुसखों में उसकी छानबीन की। सब में से उस संदिग्ध पंक्ति या शब्द की जगह पर जो सही नज़र आया, वही अपनाया। इस तरह आबिद साहब ने मुस्तनद मतन सही तरतीब में लिखा और उसका सही उर्दू गद्य अनुवाद वाक्यार्थ (**Paraphrase**) की शक्ल में किया। उनकी किताब "ग़ज़लियात भाई नंद लाल जी "गोया मअ उर्दू तरजुमा" शीर्षकाधीन पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला की ओर से प्रकाशित हुई। इस 'बंदगीनामा' में गोया जी की साठ ग़ज़लें हैं।

सरदार भगत सिंघ मेघोवालिया साहिब ने जाने कहां से 'बंदगीनामा' फ़ारसी का ६० गज़लों और १९ रुबाइयों पर आधारित मतन फ़राहम करके उसकी दक़ीक़ (कठिन, **Standard**) अंग्रेज़ी में व्याख्या की और १ जुलाई, १९७९ ई को उनकी किताब '**An Extract From Diwan-i-Goiya**' मंज़रेआम पर आई। यह सम्पूर्ण 'बंदगीनामा' है।

परलोकवासी अल्लामा नादिम बलख़ी साहब के सुपुत्र जनाब डॉ मज़फ्फ़र बलख़ी, रीडर, फ़ारसी, रांची यूनीवर्सिटी (उनके पी. एच. डी. के थीसिस की किताब में लिखे अनुसार) के पूर्वज प्लामों डाल्टनगंज (बिहार) के थे। भाई नंद लाल जी 'गोया' भी उसी गांव के रहने वाले थे। उनके उस समय के बुजुर्ग गोया जी के खास मुसाहिब (पग्ग-वट्ट भाई जैसे) थे। बलख़ी साहब से हमें भाई नंद लाल जी 'गोया' के हस्तलिखित 'बंदगीनामा' की फोटो कापी प्राप्त हुई थी। इसका मतन भी कहीं-कहीं भिन्न है।

## अनुरोध

'गुरमति ज्ञान' सिक्ख इतिहास तथा गुरबाणी में दर्ज शिक्षाओं द्वारा मानव समाज का मार्गदर्शन करती धार्मिक पत्रिका है। गुरबाणी के सम्मान को मुख्य रखते हुए 'गुरमति ज्ञान' के पाठक साहिबान से अनुरोध है कि वे 'गुरमति ज्ञान' को पढ़ने के बाद इसे न तो रद्दी में बेचें तथा न ही ऐसी जगह पर रखें जहां इसकी उचित संभाल न हो सके। पत्रिका को यदि घर में संभालकर रखने की उचित व्यवस्था न हो तो पढ़ने के बाद इसे किसी मित्र, रिश्तेदार आदि को दे दें अथवा किसी गुरुद्वारा साहिबान या पुस्तकालय में पहुंचा दें। --संपादक।

# श्री हरिमंदर साहिब में राग 'बसंत' की मर्यादा

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

पंचम पातशाह साहिब श्री गुरु अरजन देव जी ने आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना करते हुए 'संगीत प्रबंध' को विशेष महत्व दिया है, जिसके तहत गुरु साहिब ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की अधिकांश बाणी को 'रागात्मक प्रबंध' तले संपादित किया।

गुरु साहिब इस बात से भली-भांति परिचित थे कि लोगों के मन को दार्शनिक विचारों की समझ संगीत के माध्यम से शीघ्र और अच्छी तरह से आ सकती है। दूसरा, मनोवैज्ञानिक पक्ष से भी यह बात स्पष्ट है कि अगर धर्म और संगीत इकट्ठे हो जाएं तो मनुष्य के अंदर पनप रहे पशुत्व के भावों को परिवर्तित कर सार्थक दिशा में लगाया जा सकता है। इस बात को सामने रखते हुए श्री गुरु अरजन देव जी ने आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विशेष ३१ रागों को तरतीब में लाकर 'गुरमति संगीत' की परंपरा को अमर बना दिया।

इन रागों की विशेष परंपरा को कायम रखते हुए श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में गायन किया जाता कीर्तन रागों के गायन-काल और ऋतु (मौसम) को मुख्य रखकर किया जाता है अर्थात् अमृत वेले, दोपहर, रात और मौसम के अनुसार श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज गुरबाणी को निर्धारित और निर्देशित रागों के आधार पर हजूरी रागी सिंघ शबद-गायन करते हैं। अगर मौसम से संबंधित रागों की बात की जाए तो इनमें 'मलार' और 'बसंत' दो प्रमुख राग हैं। इनमें से राग 'बसंत' का शिरोमणि स्थान है। यह मौसमी रागों में बहुत ही प्रसिद्ध राग है।

श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर में होते गुरबाणी-कीर्तन में 'बसंत' राग के गायन का आरंभ पौष महीने की आखिरी रात से एक खास मर्यादा के साथ किया जाता है। यह बहुत ही श्रद्धा और रस्मी ढंग से होता है। वैसे तो सभी ऐतिहासिक गुरुद्वारों में राग 'बसंत' का गायन होता है, परंतु श्री हरिमंदर साहिब में इसके आरंभ की एक विशेष और अलग मर्यादा है।

श्री हरिमंदर साहिब में पौष महीने की आखिरी रात को लगभग ८:४५ बजे हो रहे कीर्तन के दौरान कीर्तन कर रहे रागी जत्थे द्वारा श्री अनंदु साहिब की ६ पउड़ियों के गायन के उपरांत अरदासी सिंघ विशेष रूप से श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आगे राग 'बसंत' की आरंभता के लिए 'अरदास' करता है, इसके उपरांत कीर्तनी जत्था श्री गुरु नानक देव जी महाराज द्वारा उच्चरित शब्द "*माहा माह मुमारखी चड़िआ सदा बसंतु ॥*" का गायन करता है। इस तरह श्री हरिमंदर साहिब में राग 'बसंत' के गायन की आरंभता की जाती है और 'कड़ाह-प्रशादि' की देग हाज़िर संगत में बांटी जाती है।

फिर रोज़ाना की मर्यादा में 'आसा की वार' में और समाप्ति के समय, प्रत्येक कीर्तन-चौंकी की प्रारंभता में रागी जत्थे की तरफ से

**S/o Ranjeet Singh, 2946/7, Bazar Loharan, Chowk Luxmansar, Amritsar. M : 9478896372*

बहुत ही सहज सुरों में राग 'बसंत' में ही 'मंगलाचरण' और फिर शबद का गायन किया जाता है। शबद के गायन के दौरान रागी जत्थे में जत्थेदार और सहायक की तरफ से छोटे-छोटे अलाप और बोल, अलाप किये जाते हैं; उपरांत शबद की समाप्ति के लिए कीर्तन की तकनीक 'तिहाई' लगाई जाती है, फिर सहायक ऊंचे स्तर में सलोक : "*हरि हरि नामु जपंतिआ कछु न कहै जमकालु ॥*" का गायन करता है। 'बसंत की वार' की पहली पउड़ी : "*हरि का नामु धिआइ कै होहु हरिआ भाई ॥* " का गायन रागी जत्थे की तरफ से सामूहिक रूप में किया जाता है। फिर उसी पउड़ी को सहायक रागी 'ताल रहित' गायन करता है, उपरांत जत्थेदार किसी 'मंगलाचरण' सलोक का गायन करके 'बसंत की वार' की दूसरी पउड़ी : "*पंजे बधे महाबली करि सचा ढोआ ॥*" का गायन 'पउड़ी ताल' में करता है। ठीक प्रथम पउड़ी की तरह सहायक रागी इस पउड़ी का गायन 'ताल रहित' करता है।

इसके अलावा कुछ रागी जत्थे, जो केवल 'शास्त्री अंग' का ही कीर्तन करते हैं, वे बसंत के प्रकार, जैसे राग 'बसंत', 'हिंडोल' इत्यादि रागों में सारी चौंकी के दौरान कीर्तन करते हैं। कीर्तन-चौंकी की समाप्ति के समय 'मंगलाचरण' सलोक का गायन करके तीसरी पउड़ी : "*किथहु उपजै कह रहै*" का गायन रागी जत्थे द्वारा ताल में करके फिर सहायक रागी द्वारा ताल रहित गायन किया जाता है। फिर सलोक का गायन करके समाप्ति कर दी जाती है।

यहां पर यह भी बताने योग्य होगा कि 'बसंत' राग के इस पूरे समय के दौरान "*वडा तेरा दरबारु*" के गायन की जगह 'बसंत की वार' की तीसरी पउड़ी का गायन किया जाता है।

'बसंत की वार' के इस राग की मर्यादा 'होले-महल्ले' तक हर रोज़ चलती है। 'होले-महल्ले' के दिन 'आसा की वार' के कीर्तन के बाद होने वाली 'अरदास' में 'बसंत' राग की समाप्ति है। उसी रात को श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के 'थड़ा साहिब' (श्री अकाल तख़्त साहिब) में रोज़ाना होने वाले सुख-आसन के बाद श्री अकाल तख़्त साहिब के बरामदे में विशेष कीर्तन दरबार का आयोजन किया जाता है, जिसमें रागी सिंघों द्वारा कथा-कीर्तन करने के उपरांत अरदासी-सिंघ अरदास करके 'बसंत' राग से संबंधित समूची मर्यादा को सम्पन्न करता है।

श्री हरिमंदर साहिब की समूची कीर्तन परंपरा चाहे भारतीय संस्कृति का अनुसरण करती है, परंतु यह शास्त्रीय संगीत की उन परतों को नहीं अपनाती जो मनुष्य में चंचलता पैदा करके उसे परमार्थ के मार्ग पर चलने में विघ्न पैदा करती हैं। यहां संगीत केवल कला-प्रदर्शनी अथवा मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि प्रभु-स्तुति, परमात्मा की उपमा के लिए उपयोगी साधन है, जो शब्द को रागात्मक, नादमय बनाती है।

श्री हरिमंदर साहिब की यह विलक्षण कीर्तन-परंपरा, परमात्मा से जुदा रूहों को मिलाने और टूटी हुई सूरतों को जोड़ने एवं मानव-मन को सांसारिक-मंडल से तोड़ आध्यात्मिक मंडल के साथ जोड़ने का उत्तम साधन है। यह साधन यमों व मौत के भय का अंत करने और '*मन नीवां मत उची* ' करने का साधन है। गुरमति संगीत की यह मौलिक पद्धति अपने आप में एक मिसाल है।

*गुरबाणी चिंतनधारा : ५७*

# सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

*करतूति पसू की मानस जाति ॥*
*लोक पचारा करै दिनु राति ॥*
*बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥*
*छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥*
*बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥*
*अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥*
*अंतरि अगनि बाहरि तनु सुआह ॥*
*गलि पाथर कैसे तरै अथाह ॥*
*जा कै अंतरि बसै प्रभु आपि ॥*
*नानक ते जन सहजि समाति ॥५॥ (पन्ना २६७)*

उपरोक्त पउड़ी में गुरु साहिब मनुष्य की पशुओं जैसी करतूतों का जिक्र करते हुए अज्ञानी जीव को विवेक से काम लेने हेतु प्रेरित करते हैं। पंचम पातशाह फरमान करते हैं कि हे मनुष्य! कहने को तेरी जाति मनुष्य की है लेकिन तेरी करनी अर्थात् करतूत पशुओं जैसी है। वास्तव में मनुष्य कहलवाने का तो वही अधिकारी है जो विवेकपूर्ण सही और गलत का निर्णय लेकर उचित कार्य करे, लेकिन मनुष्य तो दिन-रात दिखावे के कार्यों में लगा हुआ है। यह बाहर से तो धार्मिक (साधु-संतों जैसा) पहनावा धारण कर लेता है, परंतु इसके मन में माया की मैल भरी है। यह अंदर की मैल को छिपाने हेतु बाहरी पोशाकों का आश्रय लेता है लेकिन उससे इसकी अंत:करण की मैल छिपती नहीं है। बाहर दिखावे हेतु यह तीर्थ-स्नान भी करता है तथा ज्ञान-चर्चा भी करता है लेकिन इसके अंदर लोभ रूपी 'कुत्ता' छिपा बैठा है (जो अवसर मिलते ही अपनी जोर अजमाइश करता है)। अत: इसकी समाधियां बाहरमुखी ही हैं। अंदर लालची वृत्ति प्रबल है। यही नहीं, बाहर से तो यह शरीर पर भस्म भी लगाता है।

गुरु साहिब ऐसे जीवों को झकझोरते हुए प्रश्न करते हैं कि जिस जीव के गले में विकारों के भारी पत्थर बंधे हों तो विचार करो कि वह भवसागर को कैसे पार कर सकता है? अंतिम पंक्ति में गुरु साहिब ने स्पष्ट हिदायत की है कि संसार रूपी भवसागर से वही पार उतर सकते हैं, जिनके हृदय में प्रभु आ बसता है। ऐसे जीव ही भाग्यशाली हैं जो परमेश्वर के निज स्वरूप में एकरूप हो जाते हैं अर्थात् उन पर विकार अपना प्रभाव नहीं डाल सकते और वे अडोल अवस्था में स्थिर रहते हैं।

मनुष्य-जन्म समस्त योनियों में उत्तम है। मनुष्य-जन्म का परम लक्ष्य प्रभु-प्राप्ति है, लेकिन मनुष्य तो साधारण जीवों अर्थात् पशु-पक्षियों की तरह खाने-पीने, सोने-जागने आदि कामों में ही लगा रहता है। यह अपने आध्यात्मिक मनोरथ को विस्मृत कर बैठा है तथा बाहरी वेश को ही प्रभु-प्राप्ति का साधन मान बैठा है। ऐसे लोगों को गुरबाणी में आत्मघाती माना गया है :

*दुलभ देह पाई वडभागी ॥*
*नामु न जपहि ते आतम घाती ॥*
*खात पीत खेलत हसत बिसथार ॥*
*कवन अरथ मिरतक सीगार ॥ (पन्ना १८८)*

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो. ९९२९७-६२५२३*

*सुनि अंधा कैसे मारगु पावै ॥*
*करु गहि लेहु ओड़ि निबहावै ॥*
*कहा बुझारति बूझै डोरा ॥*
*निसि कहीऐ तउ समझै भोरा ॥*
*कहा बिसनपद गावै गुंग ॥*
*जतन करै तउ भी सुर भंग ॥*
*कह पिंगलु परबत पर भवन ॥*
*नही होत ऊहा उसु गवन ॥*
*करतार करुणा मै दीनु बेनती करै ॥*
*नानक तुमरी किरपा तरै ॥६॥*

चौथी असटपदी की छठी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह असहाय जीव को असंभव से असंभव कार्य करने हेतु उसका मार्गदर्शन करते हुए उसे उस सर्वकला समर्थ परमेश्वर को ही सब कुछ करने एवं करवाने का साधन मानते हुए उसके चरणों में अरदास करने हेतु प्रेरित कर रहे हैं।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि अंधा मनुष्य केवल आवाज़ सुनकर मार्ग कैसे खोज लेगा? कोई आंखों वाला मनुष्य अगर उस अंधे मनुष्य का हाथ पकड़ ले, तब उसका मंजिल तक पहुंचना संभव हो सकता है अर्थात् नेत्रहीन व्यक्ति स्वयं अपने गन्तव्य तक सहजता से नहीं पहुंच सकता, लेकिन अगर कोई नेत्रों वाला व्यक्ति उसकी बांह पकड़ ले तो उसे अपने गन्तव्य तक पहुंचने में दुविधा नहीं होगी। आध्यात्मिक अर्थ से इस पंक्ति का भाव यह है कि अगर परमेश्वर स्वयं (माया एवं विकारों में गलतान हुए) व्यक्ति का हाथ पकड़ ले तो इस संसार में रहते हुए भी विकारों से निर्लेप रहकर वह सदैव प्रभु-चरणों में प्रीति कायम रख सकता है।

बहरे व्यक्ति से अगर कोई पहेली पूछे तो वह कैसे समझ सकता है? नहीं समझ सकता। गूंगा व्यक्ति कैसे हरि-स्तुति के पदों का उचित गायन कर सकता है? अगर वह गाने का प्रयत्न भी करता है तो भी उसका सुर भंग हो जाता है। यह प्राकृतिक तौर पर होता ही है कि अगर गूंगा व्यक्ति सुर-ताल में ईश्वर-भजन, गाने का यत्न करे तो भी वो बेसुरा हो जाएगा। ठीक इसी प्रकार कोई लंगड़ा व्यक्ति पर्वत पर कैसे चढ़ सकता है? लंगड़े व्यक्ति का पर्वत पर चढ़ना असंभव है। अंत में पंचम् पातशाह फरमान करते हैं कि हे जीव! ऐसी बेबसी में केवल अरदास ही तुझे भवसागर से पार उतारने में सहायक हो सकती है। ऐसी परिस्थिति में केवल अरदास ही करनी चाहिए कि हे परवरदिगार! मेरी दीन और बेबस प्राणी की अरदास है कि तेरी रहमत से ही मेरा पारउतारा मुमकिन है।

विकारों में अंधे, बहरे, लंगड़े, अपाहिज व्यक्ति का एकमात्र सहारा परम दयालु परमेश्वर का 'नाम' ही है। गुरबाणी द्वारा हमें यही मार्ग-दर्शन मिलता है कि सर्वकला समर्थ प्रभु द्वारा ही इस निर्बल, अज्ञानी, पंगु जीव का उद्धार संभव है, उसी का 'नाम' ही अपाहिज जीव के लिए मंजिल तक पहुंचने का एकमात्र साधन है। यह गुरबाणी में अन्यत्र भी समझाया गया है कि किस प्रकार समर्पित भाव से परमात्मा के चरणों में अरदास करनी है :

*अंध गुंग पिंगुल मति हीना प्रभु राखहु राख ॥*
*करन करावनहारा समरथा किआ नानक जंत बिचारा ॥* *(पन्ना ५३०)*
*संगि सहाई सु आवै न चीति ॥*
*जो बैराई ता सिउ प्रीति ॥*
*बलूआ के ग्रिह भीतरि बसै ॥*
*अनद केल माइआ रंगि रसै ॥*
*द्रिड़ु करि मानै मनहि प्रतीति ॥*

*कालु न आवै मूड़े चीति ॥*
*बैर विरोध काम क्रोध मोह ॥*
*झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह ॥*
*इआहू जुगति बिहाने कई जनम ॥*
*नानक राखि लेहु आपन करि करम ॥७॥*

उपरोक्त पउड़ी में पंचम पातशाह जीव की मनोस्थिति की तसवीर प्रस्तुत करते हुए फरमान करते हैं कि यह जीव पल-पल सहायता करने वाले जीवन के आधार परमेश्वर को मन से भुलाकर मोह-माया जैसे वैरियों से प्रीति बनाए बैठा है। नाशवंत संसार घर-परिवार को ही अपना सच्चा और पक्का ठिकाना मानने की मूढ़ता कर रहा है। विकारों में ग्रस्त इस जीव को न मौत याद है और न ही परमेश्वर। जीव की वास्तविक स्थिति बताते हुए गुरु जी असटपदी के अंत में सर्वशक्तिशाली परमेश्वर के चरणों में अरदास करते हैं।

गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जीव अपने संगी-साथी परमेश्वर को याद नहीं करता, मन अंदर समाई अनेकों बुराइयों से यह प्रीति कर बैठा है। रेत के घर में अर्थात् क्षणभंगुर नाशवंत संसार में रहता हुआ वो इसे ही असली व सदैव कायम रहने वाला ठिकाना (निवास-स्थान) मान बैठा है। वो माया के रंग-तमाशों में गलतान हुआ इन्हीं नश्वर पदार्थों में रंगरलियां मना रहा है। इन खेल-तमाशों को इनके स्थिर होने का विश्वास करता हुआ वो स्वयं को अमर समझे बैठा है। इसी कारण इसे कभी मौत याद नहीं आती। (यह अटल सच्चाई है कि जिसे मृत्यु याद नहीं उसे ईश्वर भी याद नहीं रहता।) यह वैर-विरोध, काम-क्रोध, लोभ-मोह, ईर्ष्या आदि में अनेक जन्म गंवा बैठा है। अंत में गुरु पातशाह उस कृपालु प्रभु के चरणों में विनती करते हैं हे प्रभु जी! तुम स्वयं ही कृपा करके इस जीव को बचा लो।

इस क्षणभंगुर संसार को और इसके प्रत्येक पदार्थ को स्थिर जानने की मूढ़ता के कारण जीव सत्य तथा स्थिर परमेश्वर को भुलाकर असत्य और अस्थिर पदार्थों के भ्रमजाल में फंस कर इस कद्र हो गया है कि इसे अपने भले-बुरे की भी पहचान ही नहीं रही। इस संदर्भ में इतना तो स्पष्ट है कि अगर घर में कोई मौत अर्थात् सत्य की बात करे तो बड़े, बुजुर्ग अक्सर कह देते हैं कि शुभ-शुभ बोलो! जब जीवन की बातें अर्थात् झूठ की कहानियां चलती हैं तो सभी अत्यंत प्रसन्नतापूर्वक श्रवण करते हैं, आनंद लेते हैं। जीवन झूठ है, मौत अटल सच्चाई है और हम सब को झूठ-फरेब की कहानियां ही अच्छी लगती हैं, मौत जैसी अटल सच्चाई से हर कोई मुंह मोड़े बैठा है :

*खाणा पीणा हसणा सउणा विसरि गइआ है मरणा ॥*
*खसमु विसारि खुआरी कीनी ध्रिगु जीवणु नही रहणा ॥* *(पन्ना १२५४)*

गुरबाणी के आशयानुसार तो ऐसे जीवन को धिक्कार है जो सदैव कायम रहने वाले तथा जीवन के आधार प्रभु को भुलाकर केवल झूठे रंग-तमाशों में उलझा पड़ा है। गुरबाणी हर कदम पर हमारा मार्गदर्शन करती है :

*नानक जिसु बिनु घड़ी न जीवणा विसरे सरै न बिंद ॥*
*तिसु सिउ किउ मन रूसीऐ जिसहि हमारी चिंद ॥*
*(पन्ना १२५०)*

उस मालिक के बिना जीव का पल भर भी गुजारा नहीं, अत: उस हितैषी प्रभु को नहीं भुलाया जाना चाहिए जिसे हर पल हमारी चिंता है।

*तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि ॥*
*जीउ पिंडु सभु तेरी रासि ॥*

*तुम मात पिता हम बारिक तेरे ॥*
*तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे ॥*
*कोइ न जानै तुमरा अंतु ॥*
*ऊचे ते ऊचा भगवंत ॥*
*सगल समग्री तुमरै सूत्रि धारी ॥*
*तुम ते होइ सु आगिआकारी ॥*
*तुमरी गति मिति तुम ही जानी ॥*
*नानक दास सदा कुरबानी ॥८॥*

चौथी असटपदी की अंतिम पउड़ी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि हे परमेश्वर! तू (सबका) मालिक अर्थात् स्वामी है। हमारी विनती आपके ही समक्ष है। तुम सारी सृष्टि के स्वामी हो, इसलिए हम सब तुम्हारी शरण में आकर तुम्हारे आगे ही अरदास-विनती कर रहे हैं। ये प्राण और शरीर अर्थात् आत्मा और देह तुम्हारे द्वारा प्राप्त बख्शिशें हैं। यह तन-मन तुम्हारी ही रहमत से मिला तोहफ़ा है। तुम ही हमारे माता-पिता हो और हम तुम्हारे बालक हैं। इस आशय से तुम ही जीवात्मा रूपी बालक के सच्चे माता-पिता हो और तुम्हारी रहमत से ही वास्तविक सुख की प्राप्ति हो सकती है। तुम्हारा कोई अंत नहीं पा सकता, तुम ऊंचे से ऊंचे, तथा बड़े से बड़े हो। विश्व के समस्त पदार्थ तुम्हारे ही हुक्म और मर्यादा में कार्यरत हैं। सम्पूर्ण रचना तुम्हारे आदेश रूपी सूत्र में पिरोई हुई है। कोई तुम्हारा पारावार, आदि-अंत नहीं जान सकता। तुम्हारी गति-मिति तुम स्वयं ही जानते हो अर्थात् तुम्हारी सामर्थ्य तथा कार्य-शैली को तुम स्वयं ही जानने में समर्थ हो। तुम्हारे सेवक तुम पर सदा बलिहार जाते हैं।

सर्वकला समर्थ प्रभु अनंत व बेअंत है। सीमित बुद्धि वाला प्राणी उसका अंत कैसे पा सकता है? उस प्रभु का गुणगान करते हुए उसकी कुदरत पर से बलिहार जाना चाहिए। गुरबाणी आशयानुसार जिस कृपालु प्रभु ने हमें यह शरीर, प्राण तथा आत्मा की दात बख्शी है उसे हृदय-घर से कभी भुलाना नहीं चाहिए :

*गुर सेवा ते भगति कमाई ॥*
*तब इह मानस देही पाई ॥*
*इस देही कउ सिमरहि देव ॥*
*सो देही भजु हरि की सेव ॥*
*भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु ॥*
*मानस जनम का एही लाहु ॥ (पन्ना ११५९)*

अर्थात् मनुष्य-जन्म को देवता भी पाने की इच्छा रखते हैं, क्योंकि प्रभु-सिमरन हेतु यही स्वर्णिम अवसर है, इसे व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। श्वास-ग्रास उस परम-पिता परमेश्वर का सिमरन करना चाहिए। यही मनुष्य-जीवन का वास्तविक लक्ष्य है और इस लक्ष्य को केवल मानव-जीवन में ही हासिल किया जा सकता है।

### सलोकु ॥

*देनहारु प्रभ छोडि कै लागहि आन सुआइ ॥*
*नानक कहू न सीझई बिनु नावै पति जाइ ॥१॥*

पांचवीं असटपदी के सलोक में गुरु पंचम पातशाह फरमान करते हैं कि अज्ञानी जीव सब कुछ देने वाले दाता प्रभु को छोड़कर अन्य स्वार्थों की पूर्ति में लीन रहता है। इस तरह उसका कोई मनोरथ सिद्ध नहीं होता अर्थात् उसे कहीं सफलता नहीं मिलती। गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि प्रभु के नाम के बिना जीव को कोई मान-सम्मान नहीं मिलता। अज्ञानी एवं कृतघ्न इंसान अविनाशी प्रभु को भुलाकर मायिक पदार्थों के मोह-जाल में फंसा रहता है और अपना लोक-परलोक गंवा बैठता है।

### असटपदी

*दस बसतू ले पाछै पावै ॥*
*एक बसतु कारनि बिखोटि गवावै ॥*

*एक भी न देइ दस भी हिरि लेइ ॥*
*तउ मूड़ा कहु कहा करेइ ॥*
*जिसु ठाकुर सिउ नाही चारा ॥*
*ता कउ कीजै सद नमसकारा ॥*
*जा कै मनि लागा प्रभु मीठा ॥*
*सरब सूख ताहू मनि वूठा ॥*
*जिसु जन अपना हुकमु मनाइआ ॥*
*सरब थोक नानक तिनि पाइआ ॥१॥*

पांचवीं असटपदी की पहली पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी मनुष्य की विचित्र वृत्ति की ओर संकेत करते हुए मूढ़ प्राणी को सुचेत करते हुए फरमान करते हैं कि उस परमेश्वर से प्राप्त दातों (बख्शिशों) का तू शुक्राना नहीं करता। अगर कुछ और मांगता है और वह तुझे नहीं मिलता तो तू उस प्रभु से गिला-शिकवा करने लगता है। उस पदार्थ के न मिलने में ही शायद तेरी कोई भलाई छिपी हो।

गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि जीव की वृत्ति ऐसी है कि वह दस वस्तुएं तो संभाल लेता है, मनवांच्छित एक अन्य पदार्थ के न मिलने से ईश्वर के प्रति रोष प्रकट करके अपना विश्वास गंवा लेता है। मूढ़ (अज्ञानी) व्यक्ति यह भी नहीं सोचता कि अगर प्रभु पहले से बख्शी हुई दस वस्तुएं भी वापिस ले ले और मांगी हुई अगली वस्तु भी न दे तो हे मूर्ख प्राणी! तू क्या करेगा अर्थात् उस सर्वशक्तिमान ईश्वर का तू क्या बिगाड़ लेगा? मनुष्य की समझदारी इसी में है कि जिस मालिक के आगे तेरा कोई जोर नहीं चलता, कोई पेश नहीं जाती, उस स्वामी प्रभु को सदैव नमस्कार कर। जिस मनुष्य के हृदय में प्रभु प्यारा बसने लगता है अर्थात् दातों से ज्यादा जिसे दातार पिता प्यारा लगने लगता है, समस्त सुख उसके हृदय-घर में आ बसते हैं। गुरु पातशाह अंतिम पंक्ति में फरमान करते हैं कि जिस मनुष्य से प्रभु अपना हुक्म मनवाता है, दुनिया के समस्त पदार्थ उसकी झोली में आ गए समझो।

वह दातार पिता सबको दातें बख्श रहा है। बिना मांगे ही उस कृपालु ने जीव को अनंत बख्शशें की हैं, लेकिन जीव कृतज्ञ न होकर कृतघ्न हो जाता है। इस तथ्य को हम एक रोजमर्रा के उदाहरण से समझने का यत्न कर सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को दूसरों का धन व अपनी बुद्धि ज्यादा नज़र आती है। अक्सर घर-परिवार व समाज के झगड़ों का मूल कारण भी यही है। लगभग सबको यही महसूस होता है कि मेरी योग्यता ज्यादा है और मुझे मिला कम है। यहीं से दुविधा, ईर्ष्या तथा बदले की भावना शुरू होती है और जीवन क्लेश एवं संताप से भर जाता है। ऐसा व्यक्ति न अपना, न परिवार, न समाज का अर्थात् किसी का भी हित नहीं कर सकता। ठीक विपरीत जब उसकी सोच प्रभु-कृपा से ऐसी बनती है कि हे मालिक, मेरी योग्यता कुछ भी नहीं, यह सब तो तेरी रहमतों का सदका मिला है तो उसका हृदय-घर उसी समय शुक्राने से भर जायेगा और शुक्राने से भरा हृदय यह कह उठता है-- "वाहिगुरु तेरा शुक्र है!" यकीन जानो, यही शुक्राना उस मालिक से मिली इन बेशकीमती श्वासों की पूंजी, अनंत प्राकृतिक पदार्थों की प्राप्ति के बदले किश्तों का भुगतान है। वैसे इंसान के पास कुछ भी अपना नहीं है, जो वो प्रभु को इन अनमोल तोहफ़ों के बदले में भुगतान कर सके। मनुष्य केवल और केवल शुक्राना करता रहे यही बहुत है :

*ददा दाता एकु है सभ कउ देवनहार ॥*
*देंदे तोटि न आवई अगनत भरे भंडार ॥*
*दैनहारु सद जीवनहारा ॥*

*मन मूरख किउ ताहि बिसारा ॥ (पन्ना २५७)*

गुरबाणी में बारंबार उस सर्वकला समर्थ प्रभु को स्मरण करते हुए हृदय से कभी न भुलाने की प्रेरणा दी गई है।

*अगनत साहु अपनी दे रासि ॥*
*खात पीत बरतै अनद उलासि ॥*
*अपुनी अमान कछु बहुरि साहु लेइ ॥*
*अगिआनी मनि रोसु करेइ ॥*
*अपनी परतीति आप ही खोवै ॥*
*बहुरि उस का बिस्वासु न होवै ॥*
*जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥*
*प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥*
*उस ते चउगुन करै निहालु ॥*
*नानक साहिबु सदा दइआलु ॥२॥*

इस पउड़ी में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने उस परमेश्वर को बड़ा शाहूकार मानते हुए, उसके द्वारा प्रदान की गई बेशकीमती पूंजी को अमानत मानकर, उसमें ख्यानत न डालने का उपदेश देकर कलयुगी जीवों को अनुग्रहीत किया है। गुरदेव फरमान करते हैं कि वह परमेश्वर जीव रूपी व्यापारी को (बिशकीमती) श्वासों सहित अनंत पदर्थों की पूंजी बख्शता है। जीव उन पदार्थों को खाता-पीता तथा अनेक तरह से उनको भोगता हुआ आनंद में रहता है। अगर वह प्रभु अपने बख्शे हुए पदार्थों में से कोई अमानत वापिस ले ले तो यह अज्ञानी जीव मन में बहुत क्रोध करता है। इसी रोष के कारण यह ईश्वर के प्रति अपना विश्वास गंवा बैठता है। अमानत में ख्यानत डालने वाला व्यक्ति फिर उस प्रभु के विश्वास का पात्र नहीं रह जाता। मनुष्य को तो बस, यही शोभा देता है कि एक अच्छे और विश्वसनीय सेवक की तरह प्रभु रूपी शाहूकार की वस्तु को प्रसन्नतापूर्वक उसके आगे रख दे और उसके आदेश का खुशी-खुशी पालन करे। इस तरह प्रसन्नतापूर्वक उसके हुक्म की प्रतिपालना करने वाले जीव को वह मालिक चौगुने पदार्थ देकर निहाल करता है। गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि वह प्रभु तो सदैव ही दयालु है।


## उपहार ऐसा जो जीवन भर याद रहे

यह बात हर एक आम व खास व्यक्ति के मन को कचोटती रहती है कि वो अपने मित्रों, सम्बंधियों को यदि उपहार दे तो क्या दे? किसी के जन्म-दिन आदि या किसी विशेष दिवस पर किसी को कुछ भेंट किया जाए तो ऐसा उपहार हो जिसे स्वीकार करने वाला जिंदगी भर याद रखे। इसके लिए अब ज्यादा सोचने और चिंता की जरूरत नहीं है। जीवन भर का उपहार है 'गुरमति ज्ञान'। उपहार भी ऐसा कि जब हर माह मित्र आदि के घर पर जाकर डाकिया 'गुरमति ज्ञान' की प्रति थमाएगा तो आपका मित्र हर माह आपका शुक्रिया करता नहीं थकेगा। आप अपने मित्र या किसी सम्बंधी को केवल १००/- रुपये में उपहारस्वरूप 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बना दीजिए और हासिल कीजिए अपने मित्र की जीवन भर की खुशियां। यह सौदा बेहद सस्ता एवं लाभकारी रहेगा। आज ही मनीआर्डर या बैंकड्राफ्ट के जरिए चंदा भेजकर अपने मित्र या सम्बंधी को 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बनाकर उसे इस बहुमूल्य 'उपहार' से निवाजें। *-संपादक।*

*दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-५१*

# महान शहीद एवं विद्वान-- कवि किरपा सिंघ

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

कवि किरपा सिंघ का प्रारंभिक नाम पंडित किरपा राम था। वे वही किरपा राम थे जिनके नेतृत्व में औरंगजेब की कट्टरता से त्रस्त कश्मीरी पंडितों का जत्था सन् १६७५ में नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब के दरबार में अरदास करने पहुंचा था कि हे सच्चे पातशाह! हमारी जालिमों से रक्षा करो। नवम् पातशाह ने उन कश्मीरी पंडितों की धार्मिक स्वतंत्रता की रक्षा के लिए दिल्ली के चांदनी चौक में शीश कटाकर बलिदान दिया था।

पंडित किरपा राम सारस्वत छिब्बर ब्राह्मण थे जो कश्मीर के मटन क्षेत्र के रहने वाले थे। इनके पिता अड्डूराम, दादा नारायण दास और पड़दादा ब्रहिम दास लम्बे समय से गुरु-घर के श्रद्धालु थे। यही नहीं, इनके तीनों भाई- शिवदास, सनमुख और चेलाराम भी समर्पित सिक्ख थे। पंडित किरपा राम की माता का नाम सरसुती था जो भाई परागे की बहन और भाई चौपा सिंघ की बूआ थी। इस प्रकार पंडित किरपा राम का समस्त खानदान सदा से गुरु-घर के प्रति समर्पित रहा था।

नवम् पातशाह की शहादत के बाद भी पंडित किरपा राम दशमेश पिता की सेवा में रहे और गुरु-घर के सभी कार्यों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेते रहे।

पंडित किरपा राम संस्कृत और अरबी-फारसी के विद्वान थे। इन्होंने इमाम गज्जाली के प्रसिद्ध अरबी ग्रंथ 'अहयाउल अलूमउलदीन' का अनुवाद 'पारस भाग' के नाम से किया। श्री अनंदपुर साहिब की तबाही के समय इस ग्रंथ का बड़ा भाग सरसा नदी में बह गया, जो बचा उसे भाई घनैय्या जी का शिष्य सेवा राम अपने डेरे धनी देश ले गया। यही कारण है कि सेवापंथी साधुओं में इस ग्रंथ का अधिक प्रचार हुआ है।

पंडित किरपा राम की विद्वता के विषय में उनका एक शिष्य जै किशन अपनी रचना 'रूपदीप पिंगल' (संवत् १७७६ वि. सन् १७१९ ई) में लिखता है :

*प्रक्रित की बानी कठिन, भाषा अगम प्रतक्ख।*
*क्रिपा राम की क्रिपा सों, कंठ करहिं सभ सिक्ख।*

बाद में पंडित किरपा राम के पिता अड्डू राम अमृत छककर गुरमुख सिंघ बने और स्वयं किरपा राम भी अमृत छककर किरपा सिंघ सजे।

कवि किरपा सिंघ उच्च कोटि के कवि भी थे। इनके छंदों में गुरमति सिद्धांतों के प्रति गहन समर्पण दिखाई देता है :

*दुहां लोकां दी काण चुकाई, जु तालिब मिहर नज़र दे।*
*काई वसतू दी चाह न जग विच, जु प्रेम पिआला भर दे।*
*अंम्रित पीवण जुग जुग जीवण, वै भेदी इशक नगर दे।*
*'सिंघ किरपा' निज रूप दरस लखि, नित उठ मौजां कर दे।*

पंजाबी भाषा में रचे गये इन छंदों में गुरु

**१/३३८ 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना) पंजाब, मो. ९४१७२-७६२७१*

के प्रति समर्पण का भाव भी है :

*दोए लोक तिनां दे चंगे, जु मुरशद दा दम भरदे।*
*निस दिन रहिण सुखाले सोई, जु आस गुरु मन धरदे।*
*मन बच करम न रंजन काहूं, हर घटि देखन हरिदे।*
*'सिंघ किरपा' निज रूप जगत लख, जनम मरण दुख हरदे।*

गुरु-घर के अनन्य भक्त कवि किरपा सिंघ दिसंबर, सन् १७०४ ई में चमकौर की जंग में बहादुरी के साथ लड़ते हुए अपने भाई सनमुख सिंघ के साथ शहीद हुए। चमकौर के युद्ध के चालीस शहीदों की सूची में कवि भाई किरपा सिंघ का नाम 'किरपाल सिंघ' करके दिया गया है। भट्ट वही मुलतानी-सिंधी के अनुसार ये शहीद किरपाल सिंघ वास्तव में कवि किरपा सिंघ और प्रारंभिक दौर के पंडित किरपा राम ही थे।

कविता

## सच्चा इंसान

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

*सिर झुका आगे निकलना, 'उसे' नहीं स्वीकार है।*
*चापलूसी के दौर में 'वो', आदमी खुद्दार है।*
*दूसरों का छीनकर 'वो', घर नहीं अपना भरे,*
*आत्मा जिंदा है उसकी, आंख पानीदार है।*
*आंख में आंसू किसी की, देख 'वो' पाता नहीं,*
*पोंछने जाता तुरंत, संवेदना-भंडार है।*
*ग़ैर के कल्याण हेतु, स्वार्थ अपना त्यागता,*
*पुण्य की पूंजी बढ़े, उसका यही व्यापार है।*
*ले रहा दुनिया से जितना, उससे ज्यादा दे रहा,*
*ढोंगियों के बीच में 'वो', सच्चा सेवादार है।*
*देखता पग-पग अनीति और उससे लड़ रहा,*
*दिल बदलकर मात देता, प्रेम ही हथियार है।*
*जाति, मज़हब, रंग आदि, भेद न भाते उसे,*
*हैं प्रभु के अंश सब, उसको सभी से प्यार है।*
*दुख दुखियों के घटाना, प्रेम दुनिया में बढ़ाना,*
*अंत में प्रभु-मिलन उसकी, ज़िंदगी का सार है।*

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.), मो : ०९४११६०७६७२*

कविता

# संत-सिपाही

-श्री सुरजीत दुखी*

हसरत को हकीकत में बदलने वाले,
जनता के मसीहा, मुल्क के रखवाले,
जालिमों के अत्याचार से टकराने वाले,
बलिदान की मशाल को जलाने वाले,
तुम्हें आदाब कहता हूं! मैं जनाब कहता हूं!!
कहां से शुरू करूं मैं, अफसाना बनी यह कहानी।
कितनी बड़ी होती है, नौ साल की जवानी?
दुखियारों के दुख सुन, पिता-गुरु को कहा,
कश्मीरी पंडितों की अत्याचार से, असमत है बचानी!
मुगलों के खिलाफ, खड़ग उठा डाली।
पहाड़ी राजाओं की हालत, बुरी बना डाली।
निर्भय, साहसी और योद्धा बना ऐसा कि
भारत से मुगल साम्राज्य की, नींव हिला डाली।
चमकौर-युद्ध में 'अजीत' और 'जुझार' कुर्बान किए।
आंखों के तारे 'जोरावर-फतह सिंघ', सरहिंद में वार दिए।
अत्याचारियों के विरुद्ध ऐसा, अभियान चलाया था।
चार साहिबज़ादों को वार, कुर्बानी का पाठ पढ़ाया था।
एकता और अखंडता का, ऐसा बिगुल बजाया।
जातिवाद और अलगाव को, जड़ से काट गिराया।
खालसा पंथ चला, मुफलिसों का उद्धार किया।
बिना भेदभाव के पानी पिला, भाई घनैया ने घायलों का उपचार किया।
आप गुरमुखी, संस्कृत, अरबी और फारसी के विद्वान थे।
साहित्य की परिभाषा में, महा विज्ञ इंसान थे।
आपकी सारी बाणी में, ईश्वर-स्तुति और गुणगान है।
इनमें जापु साहिब, बचित्र नाटक और अकाल उसतत महान है।
जफरनामा लिख आपने, औरंगजेब को हिलाया था।
बावन कवियों को भी राजकीय, सम्मान दिलाया था।
धर्म की रक्षा के लिए, 'खालसा पंथ' चलाया था।
पांच प्यारे साज कर, 'आपे गुर चेला' कहाया था।
कलम आज उठी है, गुरु-योद्धा की गाथा गाने को।
हमको इंसान का धर्म और फर्ज सिखाने को।
साहसी, वीर, कर्मशील और रक्षक बनाने को।
गुरु से ले प्रेरणा 'दुखी', अमली जामा पहनाने को।

*३३२/९, गली जट्टां, अंदरून लाहौरी गेट, श्री अमृतसर-१४३००१; मो: ९९१४५३१२२१

कविताएं

## सर्वोत्तम सच

*अब तो ऐसा ही लगने लगा है*
*कि आ गया हमारे मानसिक-विकास में ठहराव।*
*फ़सलों और पेड़-पौधों पर हम अंधाधुंध कर रहे हैं,*
*ख़तरनाक रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव।*
*रासायनिक उर्वरक बन रहे, जीवों के लिए अज़ाब।*
*इस आधुनिक सभ्यता के तथाकथिक सभ्य लोग,*
*असफ़ल हो रहे हैं पड़ाव-दर-पड़ाव।*
*सब्र और संतोष की पूंजी का करें ख्याल,*
*अपने कर्मों का देना पड़ेगा हमें हिसाब।*
*तथाकथित विकास सिद्ध हो रहा भटकाव।*
*जीवनदायिनी शुद्ध खुराकें और जड़ी-बूटियां,*
*तेजी से खत्म होने लगीं बेहिसाब।*
*सरबत्त के भले की अरदास की भावना का,*
*बरकरार रखें सम्मान, नहीं इसका कोई जवाब।*
*वनस्पति रो रही, फ़िज़ाअ भी रो रही*
*पिता 'पानी' रो रहा, माता 'धरती' रो रही*
*हम लोग मिट्टी, हवा और पानी में*
*अफ़सोस कि ज़हर मिलाये जा रहे हैं।*
*अपनी सभ्यता, अपनी संस्कृति को,*
*किसी अंधे कुएं में गिराये जा रहे हैं।*
*"पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥"*
*इस सर्वोत्तम सच को, भुलाये जा रहे हैं।*

## स्वतंत्रता?

*देश की आजादी के लिए हजारों कुर्बान हुए,*
*क्यों शहीदों की कुर्बानी का,*
*मान घटता जा रहा है?*
*मौत के बाजार में जिंदगी सस्ती बिक रही है,*
*हमारा हर सपना आंखों में,*
*मरता जा रहा है।*
*नेताओं के बयानों की संख्या का हिसाब नहीं,*
*इनमें सच को ढूंढना,*
*दूभर होता जा रहा है।*
*और ऊंची इमारतों पर तिरंगा फहरा दीजिए,*
*फिक्र है कि देश अपना नीचे,*
*धंसता जा रहा है।*
*आज क्यों कर रुक गई प्रगति अपने देश की,*
*उल्टा क्यों अवनति का*
*चक्र चलता जा रहा है?*
*आम लोगों के हकूक की चिंता किसी को नहीं,*
*न्याय मांगने वालों पर,*
*क्यों जुल्म बढ़ता जा रहा है?*
*कब मिलेगी हमें सही मायनों में स्वतंत्रता?*
*यह प्रश्न नेताओं से,*
*आमजन पूछता आ रहा है।*

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर', बी-एक्स ९२५, महल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४.*

## फ्रांस सरकार के खिलाफ़ दसतार के प्रति केस जीतने वाले स. रणजीत सिंघ को सम्मानित किया जाएगा

श्री अमृतसर : १६ फरवरी : फ्रांस सरकार द्वारा सिक्खों के अभिन्न अंग 'दसतार' पर पाबंदी लगाए जाने के विरुद्ध मानवीय अधिकारों के बारे में कौंसिल (संयुक्त राष्ट्र) में केस दायर करके जीतने वाले स. रणजीत सिंघ को पंजाब आने पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा सम्मानित किया जाएगा।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मुख्यालय से जारी प्रेस विज्ञप्ति द्वारा जानकारी देते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि फ्रांस सरकार ने सिक्खों के स्वाभिमान की प्रतीक 'दसतार' सजाए जाने पर पाबंदी लगा दी थी, जिसके तहत फ्रांस सरकार द्वारा स. रणजीत सिंघ को दसतार उतार कर फोटो खिंचवाने के बाद ही स्वास्थ्य सेवाओं एवं निवास सम्बंधी पहचान-पत्र जारी करने के लिए कहा गया था। स. रणजीत सिंघ ने दसतार उतार कर फोटो खिंचवाने से इन्कार कर दिया था।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि फ्रांस सरकार के इस फैसले के विरुद्ध सिक्खों की धार्मिक संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की ओर से भारत के प्रधान मंत्री, विदेश मंत्री तथा भारत में स्थिति फ्रांस के राजदूत को पत्र लिखकर तथा उनके द्वारा निजी रूप में मिलकर यह मसला कूटनीतक स्तर पर फ्रांस सरकार के साथ बातचीत करके हल करने के लिए बार-बार अपील भी की गई थी।

वर्णननीय है कि फ्रांस सरकार के दसतार विरोधी फरमान को न स्वीकार करते हुए स. रणजीत सिंघ ने इस फैसले के विरुद्ध मानवीय अधिकारों के बारे में कौंसिल (संयुक्त राष्ट्र) के पास दिसंबर, २००८ में पटीशन दायर की थी, जिस पर जनवरी, २०१२ में कौंसिल ने दसतार मसले सम्बंधी फैसला स. रणजीत सिंघ के हक में दिया था।

## जम्मू-कश्मीर सरकार राज्य के स्कूलों में पंजाबी भाषा को अनिवार्य विषय के रूप में लागू करे : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २९ फरवरी : जम्मू-कश्मीर राज्य के स्कूलों में पंजाबी भाषा को अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाए जाने के लिए इसे स्कूली पाठ्यक्रम में शामिल करने सम्बंधी शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने जम्मू-कश्मीर के माननीय मुख्यमंत्री जनाब उमर अब्दुल्ला को पत्र लिखा है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के मुख्यालय से जारी प्रेस विज्ञप्ति के अनुसार जत्थेदार अवतार सिंघ ने जनाब उमर अब्दुल्ला को भेजे पत्र में लिखा है कि आप जी द्वारा शासित राज्य के स्कूलों में पंजाबी न पढ़ाया जाना दुर्भाग्यपूर्ण है। उन्होंने कहा कि जम्मू-कश्मीर राज्य के अर्थिक विकास में सिक्ख भाईचारे का अहम योगदान है। सिक्ख भाईचारा अर्थिक तथा

सामाजिक रूप से जम्मू-कश्मीर राज्य का हिस्सा है। संसार भर के सिक्ख जहां कहीं भी रहते हैं वे भावनात्मक तथा मानसिक रूप से अपनी मातृ-भाषा पंजाबी के साथ जुड़े रहते हैं। इस तरह जम्मू-कश्मीर राज्य के सिक्ख भी अपने आप को अपनी मातृ-भाषा पंजाबी के साथ जुड़ा हुआ महसूस करते हैं।

उन्होंने कहा कि सिक्खों के धार्मिक ग्रंथ तथा साहित्य गुरमुखी लिपि एवं पंजाबी भाषा में हैं। गुरुद्वारा साहिबान के अंदर गुरबाणी-पाठ-कीर्तन आदि भी पंजाबी भाषा में होता है, इसलिए बिना पंजाबी भाषा तथा गुरमुखी लिपि के ज्ञान के सिक्ख अपने धार्मिक कार-विहार भी पूरे नहीं कर सकते।

## धर्म प्रचार कमेटी द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'सिक्ख संकलप, सिधांत ते संसथावां' जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा रिलीज़ की गई

श्री अमृतसर : १३ मार्च : सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड के डायरेक्टर स. रूप सिंघ द्वारा संपादित तथा शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा प्रकाशित ७०३ पृष्ठों वाली पंजाबी पुस्तक 'सिक्ख संकलप, सिधांत ते संसथावां' शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने रिलीज़ की। पुस्तक के सपांदक स. रूप सिंघ तथा उनके सहयोगी रीसर्च स्कालर, जिन्होंने इस पुस्तक में सहायक संपादक के रूप में काम किया है-- बीबी अमरजीत कौर, बीबी रणजीत कौर, स. सतविंदर सिंघ फूलपुर तथा स. अपिंदर सिंघ को मुबारकवाद देते हुए जत्थेदार अवतार सिंघ ने उनके इस महान कार्य की प्रशंसा की।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि यह पुस्तक सिक्ख दर्शन को समझने में अहम भूमिका निभाएगी। उन्होंने कहा कि किसी भी धर्म के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिए उस धर्म के संकल्पों, सिद्धांतों एवं संस्थाओं के बारे में जानना अति आवश्यक है। उन्होंने बताया कि इस पुस्तक की सामग्री तीन विषयों-- "संकल्प, सिद्धांत एवं संस्थाएं" पर अधारित है तथा इसमें कुल ११३ लेख शामिल किए गए हैं, जिनमें से अधिकांश लेख 'गुरमति प्रकाश-- पंजाबी-मासिक' के पूर्ण प्रकाशित अंकों में से लिए गए हैं।

## बाल लेखक बिकरमजीत सिंघ द्वारा लिखित पुस्तक 'इंट्रोडक्शन टु सिक्खिज़म' श्री अकाल तख़्त साहिब के जत्थेदार द्वारा रिलीज़

श्री अमृतसर : १६ फरवरी : कनाडा निवासी १३ वर्षीय अमृतधारी बाल लेखक बिकरमजीत सिंघ (बैंस) द्वारा सिक्ख धर्म सम्बंधी अंग्रेजी भाषा में लिखी पुस्तक 'इंट्रोडक्शन टु सिक्खिज़म' श्री अकाल तख़्त साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ द्वारा श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर के सूचना केंद्र में रिलीज़ की गई।

सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने बिकरमजीत सिंघ के छोटी आयु में किए गए

इस महान कार्य की प्रशंसा करते हुए कहा कि सिक्ख धर्म तथा गुरमति दर्शन की जीवन-शैली के साथ आधुनिक नौजवान पीढ़ी को जोड़ने के लिए प्रत्येक भाषा में सिक्ख-फलसफे की जानकारी देने की मुख्य आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि हर माता-पिता का कर्त्तव्य बनता है कि वे अपने बच्चों को बचपन से ही सिक्ख धर्म के प्रति जागरूक करके उच्च स्तर की शिक्षा दें ताकि संसार भर में सत्य, शांति तथा मानवीय अधिकारों का बोलबाला हो सके। सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ की ओर से बिकरमजीत सिंघ को सिरोपा बख्शिश करके यह आशीष दी गई कि उसकी कलम निरंतर पंथक-कार्यों के लिए चलती रहे।

इस अवसर पर डॉ. रघबीर सिंघ (बैंस), स. प्रभजोत सिंघ, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड के डायरेक्टर स. रूप सिंघ के अलावा अन्य गणमान्य व्यक्ति उपस्थित थे।

## परलोकवासी बाबा हरबंस सिंघ जी कार-सेवा वाले श्री अकाल तख़्त साहिब से 'पंथ रतन' सम्मान से सम्मानित

श्री अमृतसर : २० मार्च : कार-सेवा के क्षेत्र में महान शख़्सियत माने जाने वाले परलोकवासी बाबा हरबंस सिंघ जी (दिल्ली वाले) द्वारा कार-सेवा के क्षेत्र में दी गई बहुमूल्य सेवाओं के बदले उनको श्री अकाल तख़्त साहिब से पांच सिंघ साहिबान द्वारा 'पंथ रतन' सम्मान सेसम्मानित किया गया। यह सम्मान बाबा हरबंस सिंघ जी के उत्तराधिकारी बाबा बचन सिंघ जी को दिया गया।

इस शुभ अवसर पर श्री अकाल तख़्त साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने कहा कि बाबा हरबंस सिंघ जी कार-सेवा के क्षेत्र की एक लासानी शख़्सियत हुए हैं। उन्होंने अपना समूचा जीवन गुरु-घरों के सेवा हेतु अर्पण कर दिया था। बाबा जी द्वारा कार-सेवा के रूप में ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान की शानदार इमारतों के निर्माण के अलावा संगत के निवास हेतु सराय, लंगर-हाल, दीवान-हाल, स्कूल, कॉलेज तथा अस्पतालों का भी विशाल स्तर पर निर्माण करवाया गया।

सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने कहा कि बाबा हरबंस सिंघ जी को 'पंथ रतन' सम्मान से सम्मानित करने का निर्णय शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी तथा अन्य पंथक जत्थेबंदियों के अलावा समूह सिक्ख संगत की मिली-जुली मांग के आधार पर माननीय पांच सिंघ साहिबान द्वारा लिया गया।

वर्णननीय है कि बाबा हरबंस सिंघ जी का जन्म १९२० ई में गांव नूरपुरथल, जिला सरगोधा में स. आसा सिंघ तथा माता धरम कौर के घर हुआ। उनका बचपन का नाम 'हरी सिंघ' था। कार-सेवा के क्षेत्र में आने के बाद तथा अपने गुणों को लेकर वे 'बाबा हरबंस सिंघ जी' के नाम से विख़्यात हुए।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०४-२०१२